योगवाणी

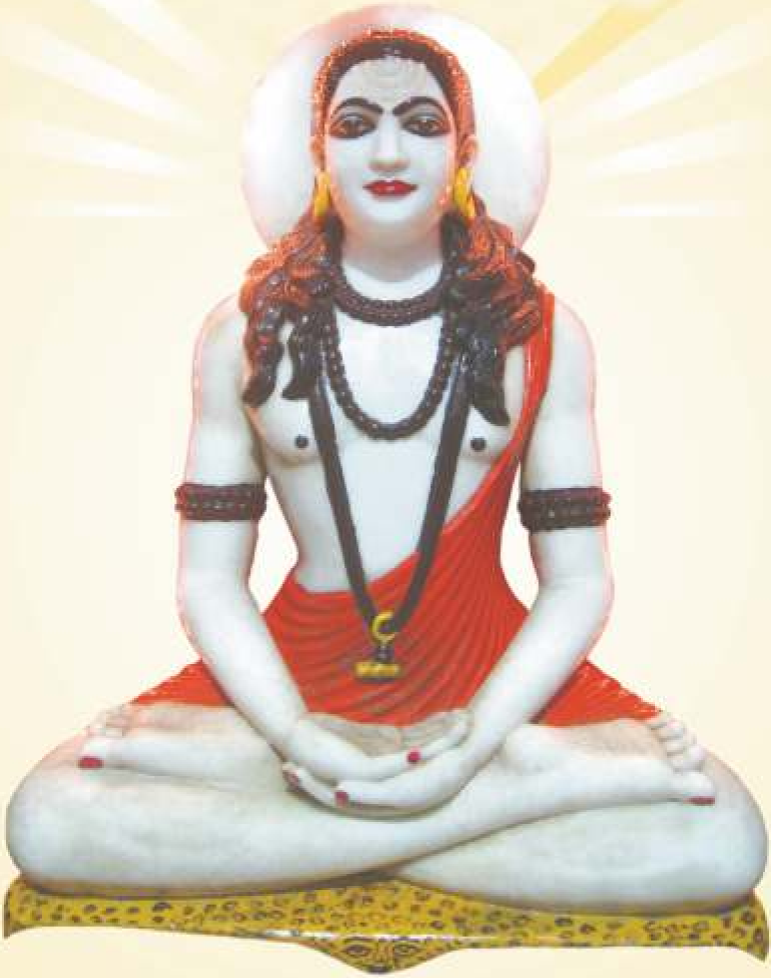

वर्ष ५०, मई २०२५

विषयानुक्रम

योगवाणी
वर्ष ५०, मई २०२५

आर.एन.आई. २९०७५/७६

"मानव जीवन में योग की साधना की परम उपयोगिता सहज सिद्ध है। योग ही एक ऐसा निरपेक्ष साधन मार्ग है जिसके आश्रय में सर्व सामान्य को जीवन की व्यवहारिकता और सच्चिदानन्द स्वरूप का ज्ञान सुलभ होता है"

राष्ट्रसन्त महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज

वार्षिक सदस्यता : १२५/-
द्विवार्षिक सदस्यता : १५०/-
पंचवार्षिक सदस्यता : ६००/-
आजीवन सदस्यता : १२००/-
एक प्रति का मूल्य : १५/-

मुद्रक:
मोती पेपर कनवर्टर्स
डी-4/1, सेक्टर 13
गीडा, गोरखपुर
दूरभाष : 0551-2580093

	पृष्ठ
जीवनामृत	
श्रीशिवगोरक्षस्तुतिः	२
योगामृत	३
गोरखवाणी	४
राशियों का मासफल	५
नाथपंथ एवं दर्शन	
गोरखनाथ उपदिष्ट सिद्धिमार्ग व उसकी विशेषताएँ -श्री अजय कुमार शुक्ल	०७
ओंकार स्वरूप विचार- प्रो. रामकिशोर त्रिपाठी	१२
धर्म, संस्कृति एवं अध्यात्म	
बच्चों में नैतिक शिक्षा का महत्व -राम जन्म सिंह	१३
अद्भुत तीर्थ है नेपाल का मुक्तिनाथ धाम -ओंकार नाथ तिवारी	१६
धार्मिक कट्टरता धरती के लिए अभिशाप - अखिलेश चन्द	१८
भिन्न भिन्न कालों में भारतवर्ष का नामकरण - आचार्य नवनीत	२१
हमारी जीवनचर्या एवं स्वास्थ्य	
आयुर्वेद का अनमोल तोहफा: त्रिफला चूर्ण	२४
पर्व विशेष	
अक्षय तृतीया: सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा का अनूठा पर्व - डॉ. अभिषेक कुमार उपाध्याय	२९
चतुर्थ आवरण-	
पुनर्नवा: आयुर्वेदिक औषधि	

॥ ॐ नमो भगवते गोरक्षनाथाय ॥

योगवाणी

(धर्म-संस्कृति, अध्यात्म एवं योग प्रधान पत्रिका)

संस्थापक-सम्पादक

राष्ट्रसन्त ब्रह्मलीन गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ

प्रधान सम्पादक

गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त योगी आदित्यनाथ

प्रबन्ध सम्पादक

डॉ. प्रदीप कुमार राव

सम्पादक

डॉ. प्रांगेश कुमार मिश्र

प्रकाशक

श्री गोरखनाथ मन्दिर

गोरखपुर - २७३०१५

web: www.gorakhnathmandir.in

E-mail: gorakhnathmandir@yahoo.com

दूरभाष : (०५५१) २२५५४५३, २२५५४५४

श्रीशिवगोरक्षस्तुतिः

दोषाकरोऽस्मि भगवन्ननुकम्पनीयः
निर्दोषता न सुलभा जगतीतलेऽस्मिन्।
दोषाकरेऽपि विमलद्युतिसंयुतेऽपि,
किं लाञ्छनं मनुजदृष्टिपथं न याति ।।५।

आक्रम्यते जगति नैकविधैर्हि रोगै-
र्भोगी जनो विततभोग-विमूढ़चेताः।
गोरक्षपाद-सरसीरुह-पूजनन्तु,
व्याधीर्हिनस्ति सकलान् खलु भोगमूलान् ।।६।।

बद्धोऽस्मि देव भव-मोह-समूह-जाले
मोच्यस्त्वया सदयमार्तिहरेण तूर्णम्।
देया च मे शुभमतिः सततं ययाऽहं
त्वत्पाद-पद्म-युगलं विमलं भजेयम् ।।७।।

गोरक्षपत्तनमिदं प्रथितं पृथिव्यां
तेपे तपः सततमत्र भवान् मुनीन्द्रः।
योगस्य मार्गमुपदिश्य जनान् कृतार्थान्
चक्रे भृशं सकललोक-शुभाभिलाषी ।।८।।

।। इति श्रीगोरक्षनाथाष्टकम् ।।

योगामृत

गोरक्ष उवाच :-

गुरुजी! कौन सो विषमी? कैसे संध? कौन चक्र लागे बंध?
कौन चेतन मन उनमन रहे? सतगुरु होय सो बुझाय कहे॥

भावार्थ– कठिनाई पूर्व स्थल–भूमि कौन हैं? और किस बंध से चक्र सिद्धि होती है? कौन चेतन मन है जो उनमन में रहता है।

मत्स्येन्द्र उवाच :-

अवधू! इंगला पिंगला विषमी संध, ताके ऊपर लागे बंध।
सदा चेतन मन उनमन रहे, ऐसा विचार मत्स्येंद्र कहे॥

भावार्थ– हे शिष्य! मल, विक्षेप सहित दु:साध्य भूमि ही योग में कठिनाई है। नाभि के उड्डियान बंध से सिद्ध मूर्त तथा साक्षी चेतन मन ही उनमनी में रहता है।

गोरक्ष उवाच :-

गुरुजी! कहाँ उत्पन्न आदि? कहाँ आदि की स्तुति समाई?
ये तत्व हो समझाई? जहाँ हमारी उत्पत्ति रहाई॥

भावार्थ–हे गुरुजी! जीवात्मा कहाँ से उत्पन्न हुई, कहाँ विलीन होगी अर्थात् व्यापक कहाँ है और समा कहाँ जाएगा, इस तत्व को समझा कर आदि, मध्य, अन्त जनक स्थिति में हमारी उत्पत्ति को कहो।

मत्स्येन्द्र उवाच :-

अवधू! तिलमध्ये यथा तैलं, काष्ठमध्ये यथानल:।
पुष्पमध्ये यथा वातस्तथा देहे निरञ्जन:॥

भावार्थ– हे शिष्य! जीवात्मा का व्याप्य – भाव सदैव इस शरीर में तिलों में तेल, लकड़ी में सामान्य अग्नि, फूल में सुगन्धि की भांति सामान्य चेतन्य अवस्था से रहती है। जीवात्मा अनादि, सत्य अविनाशी है।

■

गोरखवाणी

मन बांधूंगा पवन सुत पवन बांधूंगा मन स्यूं।
तब बोलेगा कोवत स्यूं।
मन तेरा की माई मूंडू, पवना दउं र बहाई।
मन पवन का गम नहीं, तहां रहे ल्यौ लाई।।

योग को चित्तवृत्ति का निरोध कहा गया है। मन बहुत चंचल है। योग साधक इस मन को इन्द्रिय के विषयों से मोड़कर आत्मचिंतन में प्रवृत्त करते हैं। इसी तरह प्राण को भी शरीर में स्थिर करने से योगी का शरीर मृत्यु का ग्रास नहीं बनता है। चित्त का पवन में लय और मन का चित्त में लय हो जाने से योगी को उन्मनी समाधि सुलभ होती है और मूलाधार में सुप्त कुंडलिनी महाशक्ति जाग जाती है। मन-पवन के पारस्परिक लय से शक्तिमय समर्थ शब्द, अनाहतनाद होने लगता है। साधक कहता है कि मैं मन को माया से मुंडित कर, मुड़कर उसे अपने वश में कर लूंगा, शिष्य बना लूँगा। वह मेरी दासी हो जाएगी और पवन को सहस्त्रार अथवा ब्रह्मारंध्र में समाहित करने पर उन्मनी अवस्था (समाधि के परे परर्मात्म साक्षात्कार) अलख-निरंजन का स्वरूपानुभव, सहज कैवल्यपद प्राप्त हो जाएगा। यह पद, यह अनुभव, मन और पवन से परे है, प्राण और मन का वहाँ प्रवेश नहीं है।

कोण देस स्यूं आए जोगी, कहा तुम्हारा भाव।
कौण तुम्हारी बहण भाणजी, कहाँ धरोगे पांव।।
पछिम देस स्यूं आए जोगी, उत्तर हमारा भाव।
धरती हमारी बहण भाणजी, पापी के सिरी पांव।।

हे योगी, तुम किस देश से आए हो? तुम तो निर्विकार जीवात्मा हो, तुम्हारे शरीर की किस तरह उत्पत्ति हुई, तुम शाश्वत चैतन्य चेतनस्वरूप हो, तुम्हारी क्या इच्छा है, तुम्हारे सगे-संबंधी, बहन और भानजी कौन हैं और तुम कहाँ पैर धरोगे अर्थात् किसका दमन करोगे। योगी का इस प्रश्न के संदर्भ में उत्तर है कि हम पश्चिम देश माया से आए हैं, अर्थात् हम तो निर्मल चेतन जीवात्मा हैं। पर हमने माया पंचतत्वमयी प्रकृति से शरीर की प्राप्ति की है अथवा पश्चिम मार्ग से। ■

राशियों का मासफल

गुरूवार ०१-०५-२०२५ से ३१-०५-२०२५ शनिवार तक।

***डॉ0 दिग्विजय शुक्ल**

मेष राशि - आपके मान-सम्मान में बढ़ोतरी होगी। वैवाहिक संबंध में मधुरता आएगी। समसामयिक कार्यों में, पद-प्रतिष्ठा में वृद्धि होगी। धार्मिक कार्यों में व्यस्तता बढ़ेगी। शिक्षा के प्रति विशेष रुचि पैदा होगी। व्यापार में सफलता मिलेगी।

वृष राशि - आपकी स्थिति आर्थिक दृष्टि से मजबूत होगी। पारिवारिक, प्रेमादि संबंधों में लगाव बढ़ेगा। सामाजिक कार्यों में अधिक लगाव उत्पन्न होगा। प्रतिस्पर्धा कार्यों में सफलता मिलेगी। व्यापार में सजग रहने की आवश्यकता पड़ेगी।

मिथुन राशि - आपका आर्थिक व्यय बढ़ेगा परंतु आय में सुधार की स्थिति उत्पन्न होगी। स्वास्थ्य के प्रति सजग-सतर्क रहने की आवश्यकता है। कर्म क्षेत्र में लाभ एवं व्यापार में वृद्धि होगी। सभी मनोनुकूल इच्छाओं की पूर्ति होगी। समाज में लोकप्रिय होंगे।

कर्क राशि- आपको आर्थिक रूप से लाभ मिलेगा। कार्मिक क्षेत्र में आस्था उत्पन्न होगी। धर्म के प्रति जागरूकता आएगी। अचानक कर्म क्षेत्र में उत्थान का योग बनेगा। परिवार में खुशखबरी का माहौल बनेगा। प्रतियोगी परीक्षाओं में सफलता मिलेगी।

सिंह राशि - आपके कार्मिक क्षेत्र में सफलता के योग उत्पन्न होंगे। दाम्पत्य जीवन में प्रेम सौहार्द बढ़ेगा। कार्मिक क्षेत्र में सफलता मिलेगी। शिक्षा के प्रति निरंतर प्रयास करना ज़रूरी होगा। आर्थिक रूप से मज़बूत होंगे, लेकिन स्वजनों पर विश्वास करना होगा।

कन्या राशि- आप सुव्यवस्थित एवं अनुशासित जीवन व्यतीत करना पसंद करेंगे। कर्म क्षेत्र में सफलता मिलेगी। उत्तम दिनचर्या का पालन करेंगे। निजी जीवन में सावधानी बरतनी होगी। आर्थिक संकट दूर होंगे। तीर्थाटन का योग होगा।

*ज्योतिष विभागाध्यक्ष, श्रीगोरक्षनाथ संस्कृत विद्यापीठ, गोरखनाथ, गोरखपुर

तुला राशि– मानसिक तनाव दूर होंगे। स्त्री वर्ग से सजग–सतर्क रहने की आवश्यकता है। व्यवसाय एवं नौकरी में स्थितियां अनुकूल होंगी। तनाव की स्थिति से दूर रहें। पारिवारिक जीवन में सौहार्द एवं प्रेम बढ़ेगा। रिस्की कार्यों में सफलता मिलेगी।

वृश्चिक राशि – आपको ईमानदारी, परिश्रम और कार्यकुशलता पर विश्वास करना पड़ेगा। आर्थिक दृष्टि से मजबूती आएगी। धार्मिक कार्यों में मन लगाना ज़रूरी होगा। धन का अपव्यय बढ़ने पर तनाव उत्पन्न होगा। परिवार में ध्यान देने की ज़रूरत है।

धनु राशि– आपकी वाणी में मधुरता आएगी। सोच समझ के ही कोई बात करेंगे जिससे व्यवसाय में ही नहीं, निजी कार्यों में भी परेशानी आ सकती है। आर्थिक लाभ एवं भाग्य में वृद्धि होगी। परिवार में अच्छे परिणाम मिलेंगे। शुभ संकेत मिलने का अवसर बनेगा।

मकर राशि – आपकी आर्थिक परेशानी दूर होगी। व्यवसाय में उतार–चढ़ाव बना रहेगा। किसी भी कार्य में विरोध करना अच्छा नहीं होगा। आपके निकटस्थ का वियोग हो सकता है। प्रतियोगी परीक्षाओं में सफलता मिलेगी। स्वास्थ्य के प्रति सजग रहें।

कुम्भ राशि – आपको कठिन परिश्रम के द्वारा सफलता मिलेगी। पारिवारिक जीवन में मधुरता आएगी। स्वजनों में विश्वास रखना होगा। कर्म क्षेत्र एवं व्यापार में सुखद समाचार मिलेंगे। स्वास्थ्य के प्रति सजग रहने की आवश्यकता है। आर्थिक संकट दूर होगा।

मीन राशि – अपने स्वजनों के प्रति सजग–सतर्क रहें। पारिवारिक संबंधों में मजबूती आएगी। वाणी में मधुरता लाने की आवश्यकता है। किसी अन्य से सहायता मिलने की संभावना उत्पन्न होगी। जोखिम भरे कार्यों में सफलता मिलेगी। आर्थिक विफलता दूर होगी।

■

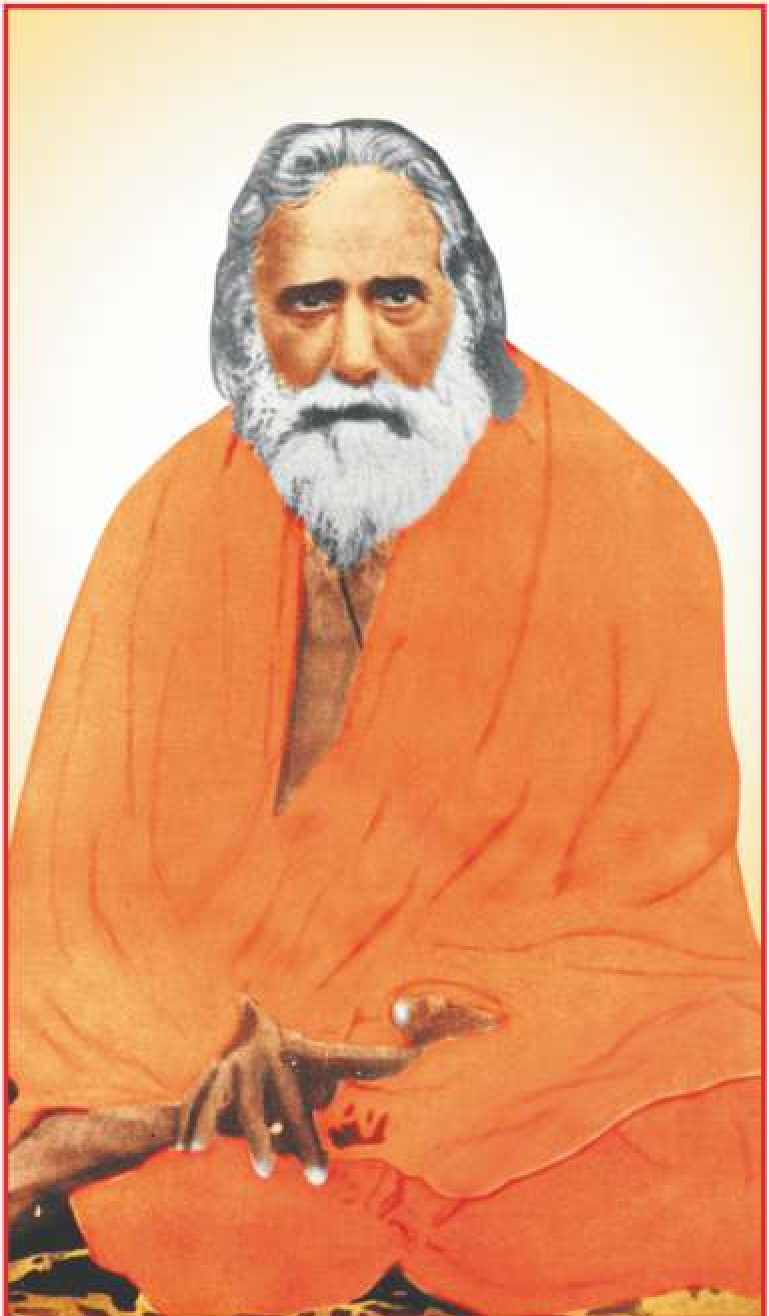

योगिराज बाबा गम्भीरनाथ

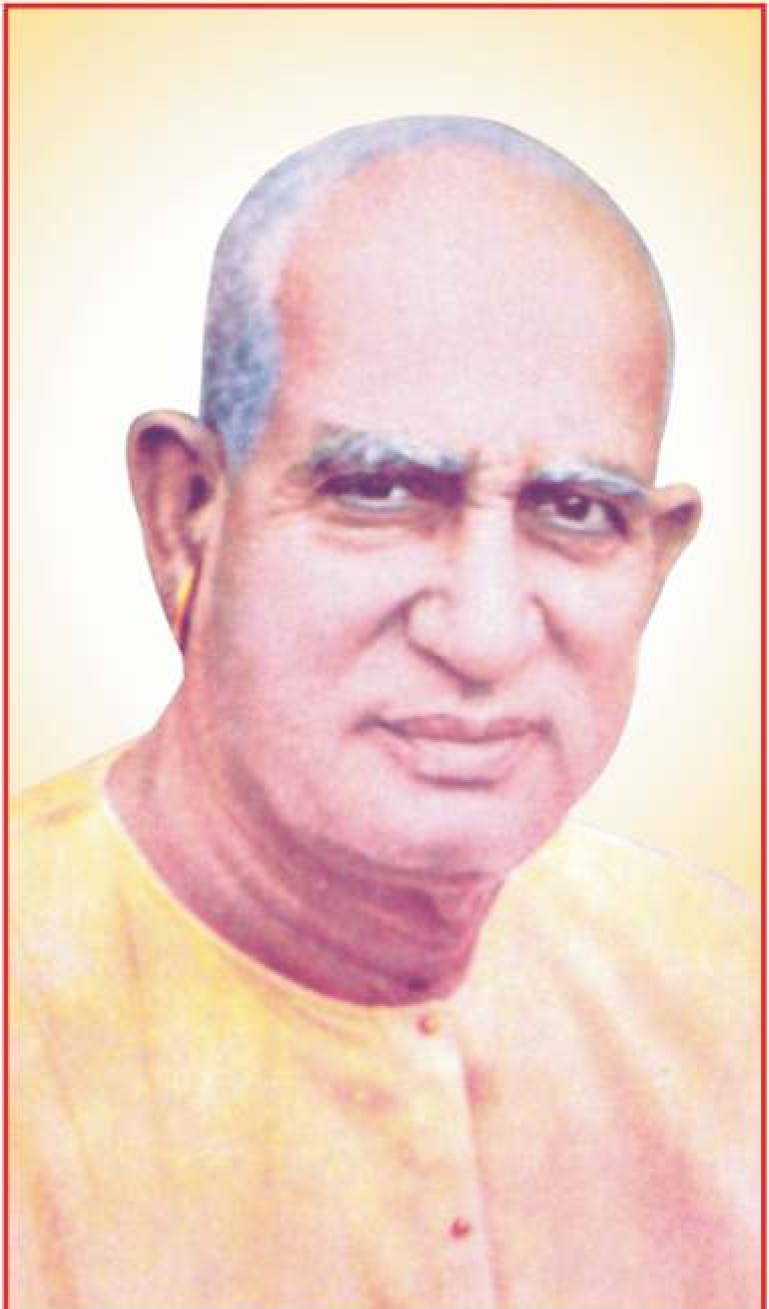

युगपुरुष ब्रह्मलीन महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज

गोरक्षनाथ उपदिष्ट सिद्धि-मार्ग और उसकी विशषताएँ

*अजय कुमार शुक्ल

योगी और दार्शनिक दोनों का चरम लक्ष्य उस सर्वव्यापी परमसत्ता को ढूँढ़ना है जो सबसे परे ब्रह्माण्ड का मूलाधार, मानव-अनुभव एवं समस्याओं का अन्तिम समाधान है। यद्यपि योगी और दार्शनिक दोनों का अन्तिम लक्ष्य एक ही है किन्तु उनके इस लक्ष्य तक पहुँचने के मार्ग भिन्न-भिन्न हैं। दार्शनिक का मार्ग बौद्धिक है जबकि योगी का मार्ग आध्यात्मिक है। दार्शनिक विचार पूर्ण तर्क और चिन्तन के मार्ग पर अग्रसर होता है जबकि योगी नैतिक और मानसिक अनुशासन के मार्ग पर अग्रसर होता है। दार्शनिक तर्कातीत पूर्ण सत्य की तार्किक धारणा प्रस्तुत करना चाहता है। अपनी बौद्धिक संतुष्टि के लिए आध्यात्मिक पारमार्थिक सत्यान्वेषण के क्रम में एक दार्शनिक का प्रयास मुख्यत: परीक्षणपरक होता है। योगी अपनी आत्मा की मौलिक आवश्यकता की पूर्ति का सर्वथा ध्यान रखता है। एक दार्शनिक के व्यावहारिक जीवन और बौद्धिक धारणा में सामंजस्य न होने पर भी वह दार्शनिक बना रहता है लेकिन एक योगी तब तक योगी नहीं माना जा सकता जब तक उसका आचरण उसकी सैद्धान्तिक मान्यताओं के अनुरूप जीवन के सभी क्षेत्रों में पूर्णत: अनुशासित न हो जाय।

योग मार्ग में ऐसे किसी बौद्धिक विकल्प की आवश्यकता नहीं होती। इसमें न तो प्रकल्पना के निर्माण की जरूरत होती है और न तो उनकी तार्किक समीक्षा की, वह तो चेतना को उच्च्च आध्यात्मिक स्तर पर उठाकर परम सत्य की प्रत्यक्ष अनुभूति करना चाहता है। इस प्रकार के अनुभव की यथार्थता में अटूट विश्वास रखकर योगी अपने मार्ग पर अग्रसर होता है।

परम सत्य की खोज योगी इस विश्वास के साथ करता है कि यद्यपि परम सत्य बौद्धिक धारणा या तार्किक विश्लेषण से परे है किन्तु वह स्वयं को मानवीय चेतना के समक्ष प्रकट कर देता है। इसीलिए योगी परम सत्य के बारे में निरर्थक तार्किक युक्तियों और धारणाओं के निर्माण के स्थान पर अपनी चेतना की, यम-नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि के आत्म अनुशासन मार्ग का अनुसरण कर उच्च्य स्तरीय बनाने का प्रयास करता है और यह प्रयास तब तक चलता रहता है जब तक अद्वैत सिद्धि प्राप्त नहीं हो जाती।

नाथ योग मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, दर्शन, धर्म एवं साधना के क्षेत्र में सर्वाधिक लोकप्रिय तथा जनमानस को प्रभावित करने वाला तत्त्व रहा है। इसका प्रधान कारण

* प्राचार्य, राम गुलाम राय पी. जी. कॉलेज, बनकटाशिव, सल्लहपुर, भटनी, देवरिया।

यह था कि इसमें एक साथ सैद्धान्तिक स्तर पर तत्त्व चिन्तन एवं व्यावहारिक स्तर पर चिन्त्य-तत्त्व को ग्रहण करने योग्य मनोभूमि के निर्माण के लिए शारीरिक साधना की व्यवस्था रही है। गोरक्षनाथ की हठयोग साधना प्रणाली एक ऐसी पुरानी परम्परा का ही किंचित नया रूप है जो कदाचित् द्वितीय शती में भी प्रचलित थी। सामान्यतः हठयोग का अर्थ है- 'हतेन बलात्कारेण योग सिद्धि' अर्थात् बलपूर्वक योगसाधना से सिद्धि-लाभ करना। वास्तव में वैषम्य से ही जगत् की उत्पत्ति होती है, समता प्रलयसूचक है। शिव-शक्ति, पुरुष-प्रकृति आदि शब्द इसी द्वन्द्व के बोधक हैं। जीव देह में प्राण और अपान का संघर्षण ही जीवन है। महर्षि याज्ञवल्क्य ने कहा है- 'संयोगो योग इत्युक्तः जीवात्म परमात्मनो' अर्थात् जीवात्मा और परमात्मा का संयोग ही योग है। 'स्कन्द पुराण' में आत्मा और मन के संयोग को योग कहा गया है। 'योगबीज' में अपान और प्राण, रजस और तेजस, सूर्य और चन्द्रमा तथा जीवात्मा और परमात्मा के संयोग को 'योग' कहा गया है। 'ह' और 'ठ' क्रमशः सूर्य-चन्द्र, इड़ा-पिंगला, प्राण-अपान एवं विन्दु-रज के भी द्योतक हैं।

गोरक्षनाथ ने अपने षडंग योग के अन्तर्गत यम और नियम की गणना न कर उन्हें मानव मात्र के लिए अनुष्ठेय माना है। फिर भी हठयोग प्रदीपिका में दस यम और दस नियमों की चर्चा की गयी है। पथ्यापथ्य का विशेष ध्यान दिया गया है। योग-साधन में गुरु महत्ता अपरिहार्य है। नाथों की योग साधना का आरम्भ गुरु तत्त्व से होता है। गुरु को ३६ लक्षणों से युक्त माना गया है। शिष्य में ३२ लक्षण ही होते हैं। साधक के इस ३२ गुणों की परीक्षा का उल्लेख गोरक्ष सिद्धान्त संग्रह तथा नाथपंथीय हिन्दी रचनाओं में प्राप्त होता है। साथ ही साथ गुरु की सुयोग्यता पर भी ध्यान दिया गया है। आत्म ज्ञान से वंचित करने याला, ज्ञानहीन गुरु सर्वथा त्याज्य है। यम-नियम के सम्यक् अभ्यास के बाद हठयोग का मूल तत्त्व प्राणायाम है पर इसकी सिद्धि के लिए आसन धैर्य की महती आवश्यकता है।

आसन शब्द उपवेशनार्थक आस्‌न धातु से बना है। जिस विधि से बैठा जाय उसी का नाम आसन है। 'आस्यते अनेन इति आसनम्'। पतञ्जलि ने इसका स्पष्टीकरण 'स्थिर सुखमासनम्म' कहकर किया है। हठयोग के ग्रंथों में आसनों की संख्या ४८००० बतायी गयी है जिसमें से ४४ आसनों की विशेष उपयोगिता सिद्ध की गयी है। पर योग साधना की दृष्टि से जिन चार आसनों की सार्थकता बतायी गयी है ये हैं सिद्धासन, पद्‌मासन, सिंहासन और भद्रासन। हठयोग प्रदीपिका में सिद्धासन को सर्वाधिक महत्त्व दिया गया है तथा इसे ही बज्रासन, मुक्तासन तथा गुह्यासन के नाम से अभिहित किया गया है। धर्म साधन के लिए शरीर को स्वस्थ रखना आवश्यक है।

आसनों के अभ्यास से शरीर में आरोग्यता, स्थिरता एवं गुरुता का नाश तथा द्वन्द्वों पर विजय प्राप्त होने से यथासुख तथा स्थित रूप अंग लाघव की प्राप्ति होती है। गोरक्षनाथ ने बड़ी दृढ़तापूर्वक कहा है–

आसण दिढ़ अहार दिढ़ जेन्यंद्रा दिढ़ होई।
गोरख कहें सणौ रे अवधू मरै न बूढ़ा होइ ॥ (गो.वा. सबदी पृ.१२५)

सुयोग्य शिक्षक की देखरेख में संतुलित आहार एवं नैतिकता के साथ आसनों का नियमित अभ्यास साधक को इस योग्य बना देता है कि वह प्राणायाम मुद्रा और अन्य यौगिक विधियों को करने की क्षमता प्राप्त कर सके। सिद्ध, पद्म, वज्र एवं स्वस्तिक आदि आसनों में से किसी एक ही आसन पर बिना कष्ट के ३ घंटे ३६ मिनट तक बैठने से आसन सिद्धि मानी जाती है।'

षडंग योग का दूसरा महत्त्वपूर्ण अंग प्राणायाम, नाड़ियों से सम्बद्ध है। शरीर में ७२ हजार नाड़ियाँ हैं। इनकी उद्गमस्थली पिण्ड में मेढ्र से ऊपर नाभि के नीचे स्थित पक्षी के आकार की कन्द योनि बतायी गयी है। योग साधना की दृष्टि से इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना नाड़ियों की विशेष महत्ता है। प्राणायाम के तीन प्रकार हैं– पूरक, कुंभक, रेचक। श्वास को अन्दर की ओर खींचना पूरक है, श्वास को कुछ समय तक अन्दर रोकना कुंभक है। श्वास को धीरे–धीरे बाहर की ओर छोड़ना रेचक है।

आसन और प्राणायाम के पश्चात् मुद्रा की साधना की जाती है। जीवात्मा और परमात्मा की एकता की जो उत्पत्ति है उसे 'मुद्रा' कहा गया है। हठयोग की पुस्तकों में मुख्यतः दस उच्चतर मुद्रा विधियों की चर्चा की गयी है– महा मुद्रा, महाबन्ध, महावेध, खेचरी, उड्डीयान, मूलबंध, जालंधर बंध, विपरीतीकरण, वज्रोली एवं शक्ति चालन। इनमें से किसी एक की सफलता आश्चर्यात्मक अनुभूतियों का साक्षात्कार कराने में समर्थ है। 'हठयोग प्रदीपिका', 'शिव संहिता' एवं 'घेरण्ड संहिता' के अनुसार मुद्राओं के अभ्यास से सभी नाडियों में प्राण का सहज गति से प्रवेश, वीर्य की स्थिरता, कशायों और पातकों का नाश, सर्वरोगों का उपशमन, जठराग्नि की वृद्धि, शरीर की निर्मलकान्ति, जरा का नाश, पंचतत्त्वों पर विजय एवं नाना प्रकार की योग सिद्धियों की प्राप्ति बतायी गयी है। परन्तु इनका मुख्य कार्य है कुण्डलिनी शक्ति का उद्बोधन ।'

प्रत्याहार के सम्बन्ध में गोरक्ष संहिता में कहा गया है कि चन्द्र की अमृतमयी धारा को सूर्य ग्रस्त करता है। उसे सूर्य से हटाकर स्वयं ग्रसना ही प्रत्याहार है। 'सिद्ध–सिद्धान्त पद्धति' एवं 'गोरक्ष पद्धति' में कहा गया है कि इन्द्रियों को विषयों से हटाकर अलग करना ही प्रत्याहार है। प्रत्याहार की साधना से मानसिक विकार नष्ट होते हैं। इसकी

साधना के लिए सतत प्रयत्न के साथ धारणा का भी अभ्यास वांछनीय है। धारणा एक निश्चित वस्तु पर ध्यान केन्द्रित करने की निश्चित प्रक्रिया है। हृदय में मन एवं प्राणवायु को निश्चल करके पृथ्वी, जल, तेज, वायु एवं आकाश इन पंच महाभूतों को पृथक–पृथक धारण करना 'धारणा' कहलाती है। धारणा के उपरान्त ध्यान की गणना की गयी है जिसका भाव परम अद्वैत है। घेरण्ड संहिता में ध्यान के दो भेदों का निर्देश किया गया है– स्थूल एवं सूक्ष्म । गोरक्ष पद्धति में कहा गया है कि एकान्त एवं पवित्र स्थान में बैठकर पद्मासन या स्वस्तिकासन लगाकर शरीर को सरल बनाकर आधारादि चक्रों में मन लगाकर नासाग्र में दृष्टि देकर कुण्डलिनी सहित ध्येय वस्तु का ध्यान करने से योगी समस्त पापों से मुक्त हो जाता है। साधक ज्यों–ज्यों शुद्ध, दृढ़, असम्पृक्त और पूर्वाग्रहरहित मन के साथ गहनतर ध्यान में मग्न होता जाता है वह मानव चेतना के अन्तर्तम प्रदेशों में छिपे हुए आध्यात्मिक रहस्यों को प्रत्यक्ष अन्तर्ज्ञान से अनुभूत कर लेता है। उसका मन और प्राण–शक्ति एकनिष्ठ एवं अन्तरोन्मुख होने के कारण क्रमशः उत्तरोत्तर परमात्म तत्त्व से अभिभूत और ज्योतिमण्डित हो जाती है। इस निकास की स्थिति में उसकी व्यक्तिगत चेतना पूर्ण प्रकाशित ऊर्ध्वचेतन स्थिति तक उठ जाती है जिसमें वैयक्तिकता की सीमाएँ अतिक्रमित हो जाती हैं। जहाँ विश्व का, अहम् और इदम् का, आत्म और मन पर का विरोध शमित हो जाता है। यह स्थिति 'समाधि' की स्थिति कहलाती है जो गहन ध्यानावस्था की पूर्णता है।

मन के द्वारा ध्येय का ध्यान करते–करते उसका ध्येयाकार हो जाना ही समाधि की पूर्णावस्था है। पतञ्जलि ने इसी अवस्था की ओर संकेत किया है–

तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः ।

गोरक्षनाथ उपदिष्ट सिद्धि–मार्ग और उसकी विशषताएँ

समाधि प्रक्रिया का उल्लेख करते हुए गोरक्ष पद्धति में कहा गया है कि योगीसाधक सिद्धासन लगाकर दोनों हाथ के अँगूठों से दोनों कर्णछिद्र, तर्जनियों से नेत्र, मध्यमाओं से नासिका और अनामिका तथा कनिष्ठा से मुख बंद कर अधिमुख द्वार से पूरित करके मूलाधार में रहने वाली अग्नि तथा अपान वायु सहित प्राण वायु को हृदय–कमल में धारण कर ऊर्ध्वस्थ का सहस्रदल कमल में धारण करें। इस प्रकार समाधि का अभ्यास करने वाला योगी अपानवायु सम्मिलित प्राणवायु होकर सर्वद्रष्टा साक्षीभूत अंतरात्मा के तुल्य हो जाता है। समाधिस्थ योगी के चारों तरफ ब्रह्म ही अवस्थित रहता है। धीरेन्द्र ब्रह्मचारी का मत है कि कुण्डलिनी शक्ति को जागृत कर सैकड़ों वर्ष तक की समाधि लगायी जा सकती है।

परम विशुद्ध परात्पर चैतन्य, सर्वव्यापी परम सत्ता को प्राप्त करने तथा समाधि सिद्धि में 'गोरक्षनाथ उपदिष्ट सिद्धि मार्ग' का विशेष महत्त्व है। गुरु गोरक्षनाथ ने जिन सिद्धि-मार्गों का वर्णन किया है उनकी विशेषता यह है कि उन मार्गों पर क्रमशः चलता हुआ व्यक्ति समाधि को तो प्राप्त होता ही है, सर्वव्यापी परम सत्ता की प्राप्ति भी उसे हो जाती है।

उपर्युक्त विवेचनाओं के आधार पर निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि 'गोरक्षनाथ उपदिष्ट सिद्धि-मार्ग' का परम तत्त्व के साक्षात्कार में विशेष महत्त्व है। यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि अष्ट मार्ग हैं जिनमें से गोरक्षनाथजी ने यम, नियम को छोड़कर शेष छः को ही अपने षडंग योग में स्वीकार किया है तथा यम, नियम की गणना न कर उन्हें मानव मात्र के लिए अनुष्ठेय माना है। फिर भी हठयोग प्रदीपिका में दस यम और दस नियमों की चर्चा की गयी है। गुरु गोरक्षनाथ के षडंग योग और हठयोग प्रदीपिका के अनुसार यही सिद्धि-मार्ग है जिन पर क्रमशः चलता हुआ व्यक्ति सर्वव्यापी, परम विशुद्ध परात्पर चैतन्य परम तत्त्व का साक्षात्कार कर सकता है।

■

ओंकार स्वरूप विचार

*प्रो. रामकिशोर त्रिपाठी

ओंकार शब्द का मूल है। ओंकार से ही सभी वर्णों की निष्पत्ति हुई है। ब्रह्मा के मुख से सर्वप्रथम ओंकार शब्द निर्गत हुआ।

ओंकारश्चाथ शब्दश्च द्वावेतौ ब्रह्मणः पुरा ।
कण्ठं भित्वा विनिर्यातौ तस्मान्माङ्गलिकावुभौ ॥ (स्मृति)

ओंकार शब्द मांगलिक होने के कारण प्रत्येक मंत्र के आदि में महाव्याहृति के रूप में प्रयुक्त होता है।

ओंकर से सकल जगत् की सृष्टि होती है। तथा ओंकार में स्थित जगत् ओंकार में ही लीन होता है। ओंकार आत्मा का प्रतीक है। **''ओंकार आत्मैव, संविशत्यात्मनाऽऽत्मानं य एवं वेद''** (मा० १२) **''ओंकार एवेदं सर्वम्'** (छा०उप० २/२३/४) **ओंकारमात्रमखिलं विश्वप्राज्ञादि – लक्षणम्'** (अक्ष्युप० ४६)

ओंकार का चिंतन सकलभौतिकतापों का निवर्तन तथा परमात्म प्राप्ति का उपाय है। ओंकारं यो न जानाति ब्राह्मणो न भवेत्तु सः। ओंकार को आत्मा का स्वरूप माना जाता है। ओंकारे परे ब्राह्मणि पर्यवसितो भवेत् स आत्मन्येवात्मानं परं ब्रह्म पश्यति। ''ओंकार की उपासना निर्गुण ब्रह्म की उपासना है। **ओमित्येकाक्षरमात्मस्वरूपम् ओमित्येकाक्षरमंत्रः प्रणवं विद्धि''**

ओंकार का चिंतन अनुस्मरण धर्म, अर्थ तथा काम त्रिविधपुरुषार्थ का साधन होते हुए मोक्ष का भी साधन है।

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन् मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन देहं स याति परमां गतिम्॥

ओंकार अद्वितीय अविनाशी आत्मतत्व है। इसका स्मरण करता हुआ जो मनुष्य शरीर त्याग करता है, वह अवश्य ही मोक्ष को प्राप्त होता है। ओंकार ज्ञानराशि वेद का बीज है। अतः ओंकार की महत्ता का वर्णन किया गया है।

■

बच्चों में नैतिक शिक्षा का महत्व

***राम जन्म सिंह**

नैतिक शिक्षा का तात्पर्य मानवीय आचरण, सदाचार तथा संस्कार के उन सार्वभौमिक एवं शाश्वत सिद्धांतों एवं मूल्यों की शिक्षा से है जो बालक के मन-मस्तिष्क में अच्छे-बुरे तथा सत्य-असत्य की विभेदनकारी समता पैदा कर सके।

इसमें सामाजिक तथा नैतिक मूल्यों तथा नियमों परंपराओं का विशेष महत्व होता है।

जिन शाश्वत मूल्यों पर नैतिक शिक्षा की आधारशिला रखी गई है, उनकी पहली सीढ़ी चरित्र निर्माण है। संस्कृत वाङ्मय में एक बहु पठित श्लोक आया है-

वृत्तं यत्नेन संरक्षेद् वित्तमायाति याति च।
अक्षीणो वित्ततः क्षीणो वृत्ततस्तु हतो हतः॥

अर्थात् मनुष्य को अपने चरित्र की रक्षा यत्न पूर्वक करनी चाहिए। धन तो आता-जाता रहता है। क्योंकि जिसका धन चला जाता है, उसका कुछ भी नहीं गया परंतु यदि आचरण नष्ट हो गया तो समझो वह मर गया।

महाकवि संत शिरोमणि तुलसीदास जी ने कहा है कि यदि मनुष्य किसी पर्वत की उच्च शिखर से गिर जाए तो उसकी एक ही बार मृत्यु होगी। परंतु यदि वह चरित्र रूपी गिरि से फिसल जाए तो उसके हज़ार-हज़ार जन्म व्यर्थ हो जाते हैं -

''गिरि ते जो भू पर गिरे, मरैं सो एकहिं बार।
जो चरित्र गिरि ते गिरे, बिगरे जनम हजार॥''

नैतिक शिक्षा ही वह प्रभावी उपकरण है जो छात्र-छात्राओं को यह बोध कराता है कि आचरण से बालक को ही उसके आगे के जीवन में आयु, आरोग्यता, बल, सुखी परिवार, अर्थ तथा यश की प्राप्ति होती है। ऐसे बालकों को ही श्रद्धा, मेघा, कीर्ति, पूजा, विवेक तथा वाकचातुर्य की प्राप्ति होती है।

यथा आचारवन्तो मनुना लभन्ते,आयुश वित्तं च सुतांश सौरवम।
धर्मं तथा शाश्वतमीशलोममत्रापि विद्वज्जन पूज्यतां च॥

अंग्रेज़ी भाषा के इस आशय का एक स्लोगन यह उद्घृत् करना समाचीन होगा। इसका अर्थ है कि नैतिक मूल्यों वाला एक निरक्षर व्यक्ति, नैतिक मूल्यों से विहीन हज़ारों एम.ए. डिग्री धारकों से बेहतर होता है। - "An illiterate with moral character is better than thousands of M-A-s with no moral character"

---

*अवकाशप्राप्त प्रधानाचार्य, महाराणा प्रताप इंटर कॉलेज, गोरखपुर

नैतिक शिक्षा ही वह जादुई छड़ी है जो बालक के छात्र जीवन में उन सभी गुणों और मूल्यों का समावेश कराती है जिनसे उसका आगे का जीवन दे दिप्यमान होता है। उसके अंदर उत्साह, कार्यकुशलता, व्यसनों से अनाशक्ति, दूरदर्शिता, वैचारिक दृढ़ता, बहादुरी, दृढ़ निश्चय, संवेदनशीलता तथा भाई-चारे की भावना और कृतज्ञता ज्ञापन का दैवीय गुण उत्पन्न होता है। नैतिक शिक्षा बालक को मात्र वह पुस्तकीय ज्ञान ही नहीं सिखाती जिसे वह नहीं जानता, बल्कि वह व्यवहार कुशलता भी सिखाती है जो वह नहीं करता।

नैतिक शिक्षा के माध्यम से ही शिक्षक अपने छात्र को परिश्रम, स्वावलंबन, सत्य, प्रेम तथा अहंसा के जीवनोपयोगी पाठ पढ़ा जाता है। बालक समझ जाता है कि पुरूषार्थ भाग्य की विषमता वाली रेखाओं को बदल देता है। भाग्य पुरुषार्थ का अनुसरण करता है। परिश्रम वह प्राप्त मणि है जो दुर्भाग्य लौह-खण्डों को स्वर्ण में बदल देता है। वह सीख जाता है कि आत्मसम्मान और राष्ट्र गौरव के रक्षार्थ किस प्रकार समुद्र की अटल गहराइयों में तथा अग्नि की प्रचंड ज्वालाओं में अपना जीवन उत्सर्ग करना श्रेयस्कर होता है। आपबीती और कलंक से बचाया हुआ जीवन उसको स्वीकार्य नहीं होता।

नैतिक शिक्षा बालक को इस तथ्य का बोध कराती है कि संपूर्ण विश्व हमारा कुटुंम्ब है। प्राकृतिक संसाधनों, सरकारी संपत्तियों तथा स्वदेश की संस्कृति और सभ्यता की रक्षा करना बालक का परम कर्तव्य है क्योंकि वही कल का नागरिक है। धोखा देकर, किसी को धक्का देकर आगे बढ़ने से बेहतर है असफल होना। यदि हमने राष्ट्र गौरव और आत्मसम्मान बचा लिया तो समझो हमारा जीवन सफल हो गया। यदि हमने अपने आचरण से अपने माता-पिता और गुरु का दिल जीत लिया तो समझो हमने संसार जीत लिया।

सारांशतः नैतिक शिक्षा के कतिपय महत्वपूर्ण गुणों का निरूपण इस प्रकार किया जा सकता है-

क) बच्चों के सर्वांग विकास के अंतरगत उसका शारीरिक, मानसिक भावनात्मक तथा अध्यात्मिक विकास करना।

ख) छात्र को उसका व्यक्तिगत महत्व तथा समाज के लिए उसके मूल्य को प्रतिस्थापित करना।

ग) व्यवहार कुशलता, परस्पर भाई चारा, वसुधैव कुटुंम्बकम की भावना को बलवती करना।

घ) राष्ट्र गौरव, राष्ट्र प्रेम, राष्ट्रीय संस्कृति तथा सभ्यता की रक्षा का दायित्व।

ङ) बालक को समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता तथा लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति आस्थावान बनाना।

च) ईश्वर की सत्ता तथा ईश्वर में विश्वास करना।

छ) सभी धर्मों का आदर करना।

ज) मनुष्य, पशु–पक्षी तथा जीवमात्र एवं पेड़–पौधों से प्रेम करना।

झ) बालक में मानवोचित गुणों सत्य, अहिंसा, परोपकार, धैर्य, भाई–चारा, उत्साह, परिश्रम, ईमानदारी, कृतज्ञता आदि का बीजारोपण।

प्रसन्नता की बात है कि उत्तर प्रदेश सरकार के शिक्षा विभाग ने नैतिक शिक्षा के महत्व को स्वीकार किया है।

शिक्षा निदेशक (माध्यमिक), उत्तर प्रदेश इलाहबाद (प्रयागराज) ने अपने पत्रांक–सं ०२ १९७६८– ९८/ १–१९ (१३)/१९७८–७९ दिनांक ७ जनवरी १९७९ द्वारा प्रदेश के समस्त माध्यमिक विद्यालयों में नैतिक शिक्षा को स्कूली पाठ्यक्रम का आवश्यक अंग बनाए जाने का आदेश दिया। नियमित कालांश के अतिरिक्त विद्यालय प्रार्थना के समय सर्वधर्म समभाव पर चर्चा तथा नैतिक मूल्यों से संपन्न महापुरुषों के जीवन कार्यों को छात्र–छात्राओं के समक्ष प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया है।

आज का विद्यार्थी ही कल का नागरिक है। किसी देश के भाग्य का निर्माण न तो वहाँ के कारखानों में होता है और न ही वहाँ की संसद और विधानसभाओं में होता है। देश के भाग्य का निर्माण वहाँ के विद्यालयों, महाविद्यालयों तथा उच्च शैक्षिक संस्थानों में होता है। देश की उन्नति वहाँ के उच्च पर्वतश्रृंखलाओं, गगनचुम्बी इमारतों, बड़े–बड़े कल–कारखानों तथा परमाणु और अंतरिक्ष प्रतिष्ठानों से नहीं मापी जाती। देश की उन्नती वहाँ के नैतिक मूल्यों से संपन्न नागरिकों से होती है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि बच्चों को नैतिक शिक्षा नियमित रूप से, प्रत्येक स्तर पर दिया जाना उचित एवं आवश्यक है।

■

अद्भुत तीर्थ है नेपाल का मुक्तिनाथ धाम

*आचार्य ओंकारनाथ तिवारी

समुद्र तल से लगभग (१२००० फीट) की ऊंचाई पर स्थित मुक्तिनाथ यात्रा एक अत्यंत पवित्र और आध्यात्मिक अनुभव है यह मंदिर हिन्दू और बौद्ध दोनों धर्मों के अनुयायियों के लिए एक महत्वपूर्ण तीर्थस्थल है। हिन्दू इसे भगवान् विष्णु का निवास मानते हैं, जबकि बौद्ध इसे पद्मसंभव से संबंधित एक सिद्ध क्षेत्र मानते हैं।

यात्रा का प्रारम्भ

मुक्तिनाथ यात्रा की शुरुआत प्रायः काठमांडू से होती है। काठमांडू से हवाई मार्ग या सड़क मार्ग द्वारा पोखरा पहुँचते हैं। पोखरा से जोमसोम तक की यात्रा हवाई मार्ग से या फिर सड़क द्वारा की जाती है। जोमसोम से मुक्तिनाथ मंदिर की हेलिकॉप्टर या यात्रा सड़क मार्ग से की जाती है, जो पहाड़ी रास्ता, कठिन और रोमांचक है।

प्राकृतिक सौंदर्य

यात्रा मार्ग में हिमालय की बर्फ से ढकी चोटियाँ, कलकल बहती नदियाँ और शुद्ध पर्वतीय वायु मन को अत्यंत आनंदित करती हैं। रास्ते में मिलने वाले गुरुङ और थकाली समुदायों के गांव अद्भुत संस्कृति की झलक प्रदान करते हैं।

मुक्तिनाथ मंदिर

मुक्तिनाथ मंदिर समुद्र तल से लगभग ३,८०० मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। यहाँ १०८ जलधाराएँ हैं, जिनसे लगातार ठंडा जल गिरता रहता है। ऐसा माना जाता है कि इन जलधाराओं में स्नान करने से समस्त पापों का क्षय हो जाता है। मंदिर में भगवान् विष्णु की मूर्ति है, जिन्हें यहाँ ''मुक्तिनारायण'' के रूप में पूजा जाता है।

धार्मिक महत्त्व

मुक्तिनाथ को ''मोक्ष का द्वार'' कहा गया है। हिन्दू मान्यता के अनुसार यह स्थल 108 दिव्यदेशों में से एक है। यह तीर्थस्थल चार धाम यात्रा के अंतर्गत भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है। बौद्ध धर्म में इसे ''चुमिग ग्यात्सा'' कहा जाता है, जिसका अर्थ होता है ''एक सौ जलधाराओं वाला स्थान''।

यात्रा का अनुभव

पर्वतों की गोद में बसे दिव्य और शांत वातावरण में स्थित मुक्तिनाथ की यात्रा मेरे जीवन का एक अविस्मरणीय अनुभव है। यह यात्रा न केवल एक धार्मिक अनुष्ठान

*व्याकरण शिक्षक, नासिक महाराष्ट्र।

थी, बल्कि आत्मा को छू लेने वाली आध्यात्मिक यात्रा थी।

जब हम मुक्तिनाथ मंदिर पहुँचे, तो मन में एक अजीब सी शांति और श्रद्धा का भाव उत्पन्न हुआ। वहाँ की सबसे अद्‌भुत बात थी – १०८ जलधाराओं से गिरता जल बर्फ जैसा ठंडा है। अत्यधिक ठंड होने के बावजूद मैंने उन धाराओं के नीचे स्नान किया। शरीर काँप उठा, लेकिन मन में असीम आनंद की लहर दौड़ गई।

साथ ही समीप के मन्दिर में स्थित ''ज्वलंत अग्नि'' जिसमें बिना किसी बाहरी ईंधन के लगातार आग जलती रहती है इसको देख कर आश्चर्य हुआ –यह स्थान सचमुच चमत्कारों से भरा है।

मुक्तिनाथ पहुँचकर लगा कि जैसे जीवन के सारे दुख–दर्द, तनाव और भ्रम पीछे छूट गए हों। वहाँ की हवा में कुछ विशेष था – शांति, भक्ति, और मोक्ष की अनुभूति। यह स्थान शरीर को थका सकता है, पर आत्मा को ऊर्जा से भर देता है। सचमुच मुक्तिनाथ की यात्रा ने मुझे जीवन की क्षणभंगुरता और आध्यात्मिक शाश्वतता का अनुभव कराया। **ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ**

■

धार्मिक कट्टरता धरती के लिये अभिशाप

* **अखिलेश चन्द**

सांप्रदायिक हठ, धार्मिक कट्टरता तथा इसका अनुसरण करने वाले कट्टरपंथी और उनके वंशजों ने प्राकृतिक सौंदर्य से भरी इस धरती को सदा अपनी हिंसक प्रवृत्ति से जकड़ रखा है और बार–बार इसे रक्त रंजित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। यद्यपि स्वामी विवेकानंद ने शिकागो में ११ से २७ सितंबर १८९३ को संपन्न हुए विश्व धर्म संसद में अपने अंग्रेजी भाषण में 'कूप मण्डूक' कथा को एक दृष्टांत के रूप में व्याख्यायित कर यह समझाने की चेष्टा की थी कि कुएं में रहने वाले मेंढक को पूरा संसार उस कुएं में ही नज़र आता है । स्वामीजी ने यह उदाहरण धार्मिक संकीर्णता और पूर्वाग्रह से ग्रसित कट्टर समाज की सोच को उजागर करने के लिये दिया था कि कट्टरपंथी अपनी धार्मिक हठवादिता के चलते अपने धर्म को ही सर्वोपरि मान कर अन्य धर्म की वैश्विकता, उदारता को अनुभूत ही नहीं कर पाते । स्वामी जी का यह दृष्टिकोण धार्मिक रूप से कट्टर लोगों को समझाने का एक प्रयास था कि ऐसे लोग तमाम उम्र संकीर्ण विचारधारा और पूर्वाग्रह के चलते अपनी सोच में ही फंसे रहते हैं और उन्हें दुनिया के अन्य धर्म और संस्कृतियों के बारे में जानने का मौका ही नहीं मिलता है। यहां यदि हम बात करें ऐसे व्यक्तित्व की जिनके मानस पर बचपन से ही उनके संस्कारों की अमिट छाप बनी रहती है जो आगे चल कर उनके व्यक्तित्व का निर्माण करती है तो उपयुक्त होगा । ''बाल्यावस्था में कोमल मन की उर्वरा भूमि में जो भाव बीज की तरह अंकुरित व पल्लवित होते हैं वही व्यक्तित्व के निर्माण में अहं भूमिका निभाते हैं। हिंसा यदि संस्कारों से ही पनपती हो तो व्यक्ति का हिंसक होना स्वाभाविक है किन्तु बाल्यावस्था से ही करुणा, सहिष्णुता का भावबीज रोपित होगा तो प्रेम, वात्सल्य के गुणों से युक्त व्यक्तित्व का निर्माण होगा। '' जैसा बोओगे वैसा काटोगे ''यह उक्ति सिखलाती है कि जब एक क्रिया आरम्भ की जाती है तो वह अपनी सकारात्मकता को लेकर आदत बन जाती है, यही आदत हमारे चरित्र का निर्माण करती है और यही चरित्र हमारे भविष्य की सार्थकता में सुनिश्चित भूमिका अपनाता है। महाराणा प्रताप ने जब जाना कि मेवाड़ यवनों के अधीन है तो किशोरावस्था में ही चित्तौड़ स्तम्भ को साक्षी मान कर मेवाड़ को आतताईयों से मुक्त कराने का उन्होंने संकल्प ले लिया था।

*वरिष्ठ पत्रकार, आज दैनिक समाचार पत्र गोरखपुर।

पंजाब में जन्मे भगत सिंह ने अपनी लहलहाती फसलों, सरसों के पीले फूलों से सजी धरती की सुंदरता के बीच जब देश की गुलामी को महसूस किया तो उनका मन देश के लिये सबकुछ न्यौछावर करने को मचल उठा, ''मेरा रंग दे वसन्ती चोला '' ... स्वामी विवेकानंद के हृदय में भी वैदिक सभ्यता और संस्कृति के आह्लाद का कम्पन था । उन्होंने अपने भाषण में स्पष्ट रूप से कहा कि मैं उस धर्म से हूं जिसने दुनिया को सहिष्णुता और सर्वजनहिताय का पाठ पढ़ाया है, ''अयं निज: परो वेति गणना लघुचेतसाम्। उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् ।।'' मेरे तेरे के द्वंद्व से ऊपर उठकर वसुधैव कुटुम्बकम् का उदार चरित अपनाते हुए धर्म में निष्ठा जिस देश की संस्कृति है, मैं उसी महान देश के प्रतिनिधि के रूप में आपके सम्मुख उपस्थित हुआ हूं। स्वामी के इस विराट, शालीन ओजस्विता को अनुभूत कर सम्मेलन में उपस्थित सभी वक्ता और श्रोता अभीभूत हो उठे और उनके एक – एक शब्द को मोतियों की तरह पिरोने लगे। धार्मिक कट्टरता के अवसान और संकीर्ण विचारधारा के प्रति कटाक्ष के साथ ही मनुष्यता की सनातन परम्परा को सभी धर्मों पर प्रतिष्ठित करना उनका ध्येय था, जिसमें वे अपने उद्बोधन से पूरी तरह सफल रहे। धर्म के प्रति किसी भी द्वंद से ऊपर उठ कर आसन्न एवं उपयुक्त आचरण को करने के लिये उन्होंने श्रीकृष्ण के द्वारा अर्जुन को दिये उस श्लोक का भी आशय अभिव्यक्त किया कि, हे अर्जुन राग-द्वेष का आश्रय त्याग कर मेरी शरण मे आ जाओ । ''सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज। अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि ।।'' व्यक्ति का आंतरिक उत्साह उसकी वह ऊर्जा है जिसकी अनुभूति उसके स्वयं के उत्थान के लिए उसे प्रेरित करती रहती है। व्यक्तित्व के निर्माण में संस्कार व परिवेश के साथ ही उसकी रुचि जब मुखर होती है तो उसके व्यक्तित्व का निर्माण समाज में उसके महान अस्तित्व को प्रतिबिंबित करता है। ऐसे अनेकों प्रेरक प्रसंग हैं जिनमें बाल्यकाल में मानस पर अंकित प्रतिबिंब व्यक्ति के निर्माण में झलक जाता है। धर्म संसद में वक्ताओं के अपने-अपने धर्म के औचित्य को तार्किक रूप से सही ठहराने और श्रेष्ठ बताने की स्पर्धा का जब स्वामी विवेकानंद को एहसास हुआ तो भाषा से समृद्ध स्वामी जी ने पहले तो कूप मण्डूक कथा का निहितार्थ बताया और फिर अपने संबोधन से धर्मों के मूल , विस्तार और लक्ष्य को दर्शाया। उन्होंने वक्ताओं, श्रोताओं के सम्मुख विस्तार पूर्वक दर्शाया कि धार्मिक पूर्वाग्रह से ग्रसित संकीर्ण मानसिकता के लोग इस धरती को सदा लहूलुहान करते रहे हैं। अपने भाषण के

शुरुआत में उन्होंने कहा कि मैं उसी धर्म से हूं जिसने दुनिया को सहिष्णुता और सर्वजन हिताय का सन्देश दिया है। धर्म संसद में उन्होंने एक श्लोक के माध्यम से इस बात को स्पष्ट किया सभी धर्मों का उद्द्येश्य ईश्वर प्राप्ति है । उन्होंने यह श्लोक आचार्य पुष्पदंत के 'महिम्न स्त्रोत' के एक श्लोक का अंग्रेजी में भाषानुवाद कर सुनाया। इस श्लोक का अर्थ यही है कि जिस प्रकार विभिन्न रुचियों वाली नदियां भिन्न-भिन्न पर्वत के स्रोतों से निकलती हैं किंतु अंततः उनको सागर में ही विलीन होना होता है, इसी प्रकार सभी धर्मो की अवधारणा भले ही भिन्न-भिन्न हो किंतु उसकी प्राप्ति ईश्वर में ही लीन होना है ।

''रुचीनां वैचित्र्याट्टजुकुटिल नानापथजुषाम्।
नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव॥''

■

भिन्न भिन्न कालों में भारतवर्ष का नामकरण

***आचार्य नवनीत**

भारत को ''भारत'' नाम मिलने की कहानी प्राचीन काल से जुड़ी है,जहाँ इसे भरत नाम के चक्रवर्ती सम्राट के नाम पर जाना जाता था, जो कि भिन्न–२ काल खंडों में अलग–२ महापुरुषों के नाम से पुर्व के ऋषियों व ज्ञानियों द्वारा बतलाया गया है ।

अत्रापि भारतं श्रेष्ठं जम्बूद्वीपे महामुने।
यतो हि कर्मभूरेषा ह्यतोऽन्याः भोगभूमयः।।

इस जम्बू–द्वीप में भी, हे महामुने ! भारतवर्ष श्रेष्ठ है,

क्योंकि यह कर्मभूमि है और बाकी भोग–भूमियाँ ही हैं।

१–सतयुग के समय की कथानुसार – राजा प्रियव्रत ने अपने ज्येष्ठ पुत्र आग्नीध्र को जम्बूद्वीप का राजा बनाया था। उसके नौ पुत्र हुए। सबसे ज्येष्ठ पुत्र नाभि था –किम्पुरूष–हरिवर्ष–इलावृत–रम्य–हिरण्यमान्–कुरू–भद्राश्व–और नौवाँ केतुमाल था, उन्होंने नाभि को दक्षिण में स्थित हेम नामक देश प्रदान किया जिसे अजनाभ खण्ड भी कहते थे और बाक़ी सभी को भी अलग–अलग देश दिये और त्पसया में रत हो गये । हिम से चिह्नित (हिमालय) में नाभि के वशं में भरत का जन्म हुआ था। नाभि ने मेरूदेवी से ऋषभ नामक पुत्र को उत्पन्न किया ऋषभ से सौ पुत्र उत्पन्न हुए उनसे सबसे बड़े पराक्रमी भरत उत्पन्न हुए । ऋषभ ने ज्ञान–वैराग्य का आश्रय ले वन में जाने से पहले हिमालय पर्वत के दक्षिण में स्थित वर्ष भरत को प्रदान किया । इसलिए ही विद्वान लोग उनके नाम से ही उसे भारतवर्ष कहते है। यह जैनियों के प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव जी के पुत्र है । व माना जाता है इन्हीं के प्रताप से अजनाभ खण्ड का नाम भारत पडा । (म.पु.–११४)(वि.पु.–२.१)

अत्र जन्म सहस्राणां सहस्रैरपि सत्तम।
कदाचिल्लभते जन्तुर्मानुष्यं पुण्यसङ्चयात्।।

ऋषियों द्वारा बताया गया है –भारतवर्ष में जीव हजारों जन्मों के अनन्तर पुण्य जुटाने से कदाचित् मनुष्य जन्म प्राप्त करता है।

२–राजा पुरूरवा बुध तथा इला के पुत्र थे। पुरूरवा और उर्वशी के पुत्र आयुकुमार हुए उनके पुत्र नहुष हुए नहुष और अशोक सुन्दरी से वीर महान राजा ययाति उत्पन्न हुए । अशोक सुन्दरी भगवान शिव व माता पार्वती की पुत्री थी क्लप वृक्ष द्वारा प्रदान की गयी थी। ययाति राजा के दो पत्नी थी देवयानी (शुक्राचार्य की पुत्री)

*गोरखनाथ मन्दिर गोरखपुर

शर्मिष्ठा(वृषपर्वा की पुत्री) ययाति राजा के चार पुत्र हुए तुर्वस, पुरू, कुरू, अनु और यदु इनसे ही पुरू वशं - कुरू वशं - यदु वंश आगे चले है । पुरू वशं के राजा ऐती का विवाह कौशल्या के साथ हुआ। उनके पुत्र राजा दुष्यंत हुए उनकी एक पत्नी शकुंतला (विश्वामित्र, मेनका की पुत्री) उससे एक महान बालक उत्पन्न हुआ उस बालक का जन्म वनों में हुआ था वह बचपन से ही इतना वीर था के जंगल के सभी जानवरों के साथ खेलकर बड़ा हुआ था एक बार राजा दुष्यंत ने जंगल में अद्‌भुत बालक को देखा जो के शेर के बच्चों के दाँत गिन रहा था तब उन्हें ऋषि कण्व से पता चला यह बालक उनका ही पुत्र भरत है । ज्ञानी लोग बताते हैं कि चारों दिशाओं की भूमि पर उन्होंने अधिकार किया था और उन्होंने भारत बर्ष पर बहुत समय राज्य किया और सेवा भाव से राज्य किया इसलिए ही उस वीर बालक भरत के नाम पर उनके राज्य को **''भारतवर्ष''** कहा जाने लगा, जो बाद में **''भारत''** के रूप में संक्षिप्त हो गया (म.पु.-४८)

चत्वारि भारते वर्षे युगानि कवयोऽब्रुवन्।
कृतं त्रेता द्वापरं च कलिश्चान्यत्र न क्वचित् ॥ ४३॥

कवियों (मनीषियों)-ने भारतवर्षमें - कृत (सत्य), त्रेता, द्वापर तथा कलि- इन चार युगोंको बताया है। ये (युग) अन्यत्र कहीं नहीं होते।।

३-त्रेतायुग की कथानुसार- ब्रह्माजी के पुत्र का नाम था मरीचि और मरीचि के पुत्र कश्यप हुए. इसके बाद कश्यप के पुत्र विवस्वान हुए. जब विवस्वान हुए तभी से सूर्यवंश का आरंभ माना जाता है. विवस्वान से पुत्र वैवस्वत मनु हुए. वैवस्वत मनु के दस पुत्र हुए जिनमें (इल, इक्ष्वाकु, कुशनाम (नाभाग), अरिष्ट, धृष्ट, नरिष्यन्त, करुष, महाबली, शर्याति, पृषध). भगवान् राम का जन्म वैवस्वत मनु के दूसरे पुत्र इक्ष्वाकु के कुल में हुआ था. इक्ष्वाकु विकुक्षि, निमि और दण्डक पुत्र जन्म हुआ. समय के साथ धीरे-धीरे यह वंश परंपरा आगे की तरफ बढ़ती गई. जिसमें हरिश्चन्द्र रोहित, वृष, बाहु और सगर भी पैदा हुए. अयोध्या नगरी की स्थापना इक्ष्वाकु के समय ही हुई. इक्ष्वाकु के पुत्र कुक्षि, कुक्षि के पुत्र विकुक्षि हुए. इसके बाद में विकुक्षि की संतान बाण हुई और बाण के पुत्र अनरण्य हुए. जिसमें अनरण्य से पृथु और पृथु से त्रिशंकु का जन्म हुआ. त्रिशंकु के पुत्र धुंधुमार हुए. धुन्धुमार के पुत्र का नाम युवनाश्व था. युवनाश्व के पुत्र मान्धाता हुए और मान्धाता से सुसन्धि का जन्म हुआ. सुसन्धि के दो पुत्र हुए- ध्रुवसन्धि एवं प्रसेनजित। ध्रुवसन्धि के पुत्र भी एक भरत हुए. भरत के पुत्र असित के होने के बाद फिर असित के पुत्र सगर का जन्म हुआ. राजा सगर के पुत्र असमंज हुए. इसी तरह से असमंज के पुत्र अंशुमान हुए फिर

अंशुमान के पुत्र दिलीप हुए. दिलीप से प्रतापी भगीरथ पुत्र हुए जिन्होंने ही मां गंगा को कठोर तप के बल पर पृथ्वी पर लाने में सफल हुए थे. भगीरथ के पुत्र ककुत्स्थ हुए और ककुत्स्थ के पुत्र रघु का जन्म हुआ. रघु से ही वंश का नाम रघुवंश पड़ा. रघु से उनके पुत्र प्रवृद्ध हुए. प्रवृद्ध से होते होते कई वंश चलते गए. जिसमें नाभाग हुए िर नाभाग के पुत्र अय हुए. अज से पुत्र दशरथ हुए और दशरथ अयोध्या के राजा बने. दशरथ ने चार पुत्रों को जन्म दिया. भगवान् राम, भरत, लक्ष्मण और शत्रुघन हुए. भरत का अपने बड़े भाई राजा त्याग, समर्पण और शक्ति से अद्भुत होने के कारण इस देश का नाम भारतवर्ष हुआ।

न देवा दण्डमादाय रक्षन्ति पशुपालवत्,
यं तु रक्षितुमिच्छन्ति बुद्ध्या संविभजन्ति तम्।

देवगण चरवाहों की भाँति हाथ में डण्डा लेकर मनुष्यों की रक्षा नहीं करते, लेकिन वे जिसकी रक्षा करना चाहते हैं उसे स्वरक्षा के लिये उत्तम बुद्धि प्रदान करते हैं।

जय जय भारत

■

आयुर्वेद का अनमोल तोहफा त्रिफला चूर्ण

त्रिफला तीन श्रेष्ठ औषधियों हरड़, बहेड़ा व आंवला के पिसे मिश्रण से बने चूर्ण को कहते है। जो की मानव-जाति को हमारी प्रकृति का एक अनमोल उपहार है। त्रिफला सर्व रोगनाशक, रोग प्रतिरोधक और आरोग्य प्रदान करने वाली औषधि है। त्रिफला से कायाकल्प होता है त्रिफला एक श्रेष्ठ रसायन, एन्टिबायोटिक व ऐन्टिसेप्टिक है इसे आयुर्वेद का पेन्सिलिन भी कहा जाता है। त्रिफला का प्रयोग शरीर में वात पित्त और कफ़ का संतुलन बनाए रखता है। यह रोज़मर्रा की आम बीमारियों के लिए बहुत प्रभावकारी औषधि है सिर के रोग, चर्म रोग, रक्त दोष, मूत्र रोग तथा पाचन संस्थान में तो यह रामबाण है। नेत्र ज्योति वर्धक, मल-शोधक,जठराग्नि-प्रदीपक, बुद्धि को कुशाग्र करने वाला व शरीर का शोधन करने वाला एक उच्च कोटि का रसायन है। आयुर्वेद की प्रसिद्ध औषधि त्रिफला पर भाभा एटोमिक रिसर्च सेंटर, ट्राम्बे, गुरु नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर और जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय में रिसर्च करनें के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला गया कि त्रिफला कैंसर के सेलों को बढ़नें से रोकता है।

हरड़

हरड़ को बहेड़ा का पर्याय माना गया है। हरड़ में लवण के अलावा पाँच रसों का समावेश होता है। हरड़ बुद्धि को बढाने वाली और हृदय को मजबूती देने वाली, पीलिया, शोध, मूत्रघात, दस्त, उलटी, कब्ज, संग्रहणी, प्रमेह, कामला, सिर और पेट के रोग, कर्णरोग, खांसी, प्लीहा, अर्श, वर्ण, शूल आदि का नाश करने वाली सिद्ध होती है। यह पेट में जाकर माँ की तरह से देख भाल और रक्षा करती है। भूनी हुई हरड के सेवन से पाचन तन्त्र मजबूत होता है। हरड को चबाकर खाने से अग्नि बढाती है। पीसकर सेवन करने से मल को बाहर निकालती है। जल में पका कर उपयोग से दस्त, नमक के साथ कफ, शक्कर के साथ पित्त, घी के साथ सेवन करने से वायु रोग नष्ट हो जाता है। हरड को वर्षा के दिनों में सेंधा नमक के साथ, सर्दी में बूरा के साथ, हेमंत में सौंठ के साथ, शिशिर में पीपल, बसंत में शहद और ग्रीष्म में गुड के साथ हरड का प्रयोग करना हितकारी होता है। भूनी हुई हरड के सेवन से पाचन तन्त्र मजबूत होता है। २०० ग्राम हरड पाउडर में १०-१५ ग्राम सेंधा नमक मिलाकर रखे। पेट की गड़बडी लगे तो शाम को ५-६ ग्राम फांक लें । गैस, कब्ज़, शरीर टूटना, वायु-आम के सम्बन्ध से बनी बीमारियों में आराम होगा ।

बहेडा

बहेडा वात, और कफ को शांत करता है। इसकी छाल प्रयोग में लायी जाती है। यह खाने में गरम है,लगाने में ठण्डा व रूखा है, सर्दी, प्यास, वात, खांसी व कफ को शांत करता है, यह रक्त, रस, मांस ,केश, नेत्र-ज्योति और धातु वर्धक है। बहेडा मन्दाग्नि , प्यास, वमन कृमी रोग नेत्र दोष और स्वर दोष को दूर करता है बहेडा न मिले तो छोटी हरड का प्रयोग करते है

आंवला

आंवला मधुर शीतल तथा रूखा है वात पित्त और कफ रोग को दूर करता है। इसलिए इसे त्रिदोषक भी कहा जाता है आंवला के अनगिनत फायदे हैं। नियमित आंवला खाते रहने से वृद्धावस्था जल्दी से नहीं आती। आंवले में विटामिन सी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है, इसका विटामिन किसी भी रूप (कच्चा उबला या सुखा) में नष्ट नहीं होता, बल्कि सूखे आंवले में ताजे आंवले से ज्यादा विटामिन सी होता है। अम्लता का गुण होने के कारण इसे आँवला कहा गया है। चर्बी, पसीना, कफ, गीलापन और पित्तरोग आदि को नष्ट कर देता है। खट्टी चीजों के सेवन से पित्त बढता है लेकिन आँवला और अनार पित्तनाशक है। आँवला रसायन अग्निवर्धक, रेचक, बुद्धिवर्धक, हृदय को बल देने वाला नेत्र ज्योति को बढाने वाला होता है।

१. शिशिर ऋतू में (१४ जनवरी से १३ मार्च) ५ ग्राम त्रिफला को आठवां भाग छोटी पीपल का चूर्ण मिलाकर सेवन करें।

२. बसंत ऋतू में (१४ मार्च से १३ मई) ५ ग्राम त्रिफला को बराबर का शहद मिलाकर सेवन करें।

३. ग्रीष्म ऋतू में (१४ मई से १३ जुलाई) ५ ग्राम त्रिफला को चोथा भाग गुड़ मिलाकर सेवन करें।

४. वर्षा ऋतू में (१४ जुलाई से १३ सितम्बर) ५ ग्राम त्रिफला को छठा भाग सैंधा नमक मिलाकर सेवन करें।

५. शरद ऋतू में (१४ सितम्बर से १३ नवम्बर) ५ ग्राम त्रिफला को चोथा भाग देशी खांड/शक्कर मिलाकर सेवन करें।

६. हेमंत ऋतू में (१४ नवम्बर से १३ जनवरी) ५ ग्राम त्रिफला को छठा भाग सौंठ का चूर्ण मिलाकर सेवन करें।

औषधि के रूप में त्रिफला चूर्ण के फायदे

रात को सोते वक्त ५ ग्राम (एक चम्मच भर) त्रिफला चुर्ण हल्के गर्म दूध अथवा गर्म पानी के साथ लेने से कब्ज दूर होता है।

अथवा त्रिफला व ईसबगोल की भूसी दो चम्मच मिलाकर शाम को गुनगुने पानी से

लें इससे कब्ज दूर होता है।

इसके सेवन से नेत्रज्योति में आश्चर्यजनक वृद्धि होती है।

सुबह पानी में ५ ग्राम त्रिफला चूर्ण साफ़ मिट्टी के बर्तन में भिगो कर रख दें, शाम को छानकर पी ले। शाम को उसी त्रिफला चूर्ण में पानी मिलाकर रखें, इसे सुबह पी लें। इस पानी से आँखें भी धो ले। मुँह के छाले व आँखों की जलन कुछ ही समय में ठीक हो जायेगा।

शाम को एक गिलास पानी में एक चम्मच त्रिफला भिगो दे सुबह मसल कर नितार कर इस जल से आँखों को धोने से नेत्रों की ज्योति बढती है।

एक चम्मच बारीख त्रिफला चूर्ण, गाय का घी १० ग्राम व शहद ५ ग्राम एक साथ मिलाकर नियमित सेवन करने से आँखों का मोतियाबिंद, काँचबिंदु, द्रष्टि दोष आदि नेत्ररोग दूर होते है। और बुढ़ापे तक आँखों की रोशनी अचल रहती है।

त्रिफला के चूर्ण को गौमूत्र के साथ लेने से अफारा, उदर शूल, प्लीहा वृद्धि आदि अनेकों तरह के पेट के रोग दूर हो जाते है।

त्रिफला शरीर के आंतरिक अंगों की देखभाल कर सकता है, त्रिफला की तीनों जड़ीबूटियां आंतरिक सफाई को बढ़ावा देती हैं।

चर्मरोगों में (दाद, खाज, खुजली, फोड़े-फुंसी आदि) सुबह-शाम ६ से ८ ग्राम त्रिफला चूर्ण लेना चाहिए।

एक चम्मच त्रिफला को एक गिलास ताजा पानी मे दो- तीन घंटे के लिए भिगो दे, इस पानी को घूंट भर मुंह में थोड़ी देर के लिए डाल कर अच्छे से कई बार घुमाये और इसे निकाल दे। कभी कभार त्रिफला चूर्ण से मंजन भी करें इससे मुँह आने की बीमारी, मुहं के छाले ठीक होंगे, अरुचि मिटेगी और मुख की दुर्गन्ध भी दूर होगी ।

त्रिफला, हल्दी, चिरायता, नीम के भीतर की छाल और गिलोय इन सबको मिला कर मिश्रण को आधा किलो पानी में जब तक पकाएँ कि पानी आधा रह जाए और इसे छानकर कुछ दिन तक सुबह शाम गुड या शक्कर के साथ सेवन करने से सिर दर्द की समस्या दूर हो जाती है।

त्रिफला एंटिसेप्टिक की तरह से भी काम करता है। इस का काढा बनाकर घाव धोने से घाव जल्दी भर जाते है।

त्रिफला पाचन और भूख को बढ़ाने वाला और लाल रक्त कोशिकाओं की संख्या में वृद्धि करने वाला है।

मोटापा कम करने के लिए त्रिफला के गुनगुने काढ़े में शहद मिलाकर ले। त्रिफला चूर्ण पानी में उबालकर, शहद मिलाकर पीने से चरबी कम होती है।

त्रिफला का सेवन मूत्र-संबंधी सभी विकारों व मधुमेह में बहुत लाभकारी है। प्रमेह आदि में शहद के साथ त्रिफला लेने से अत्यंत लाभ होता है।

त्रिफला की राख शहद में मिलाकर गरमी से हुए त्वचा के चकतों पर लगाने से राहत मिलती है।

५ ग्राम त्रिफला पानी के साथ लेने से जीर्ण ज्वर के रोग ठीक होते है।

५ ग्राम त्रिफला चूर्ण गोमूत्र या शहद के साथ एक माह तक लेने से कामला रोग मिट जाता है।

टॉन्सिल्स के रोगी त्रिफला के पानी से बार-बार गरारे करवायें।

त्रिफला दुर्बलता का नास करता है और स्मृति को बढाता है। दुर्बलता का नास करने के लिए हरड़, बहेडा, आँवला, घी और शक्कर मिला कर खाना चाहिए।

त्रिफला, तिल का तेल और शहद समान मात्रा में मिलाकर इस मिश्रण कि १० ग्राम मात्रा हर रोज गुनगुने पानी के साथ लेने से पेट, मासिक धर्म और दमे की तकलीफे दूर होती है इसे महीने भर लेने से शरीर का सुद्धिकरन हो जाता है और यदि ३ महीने तक नियमित सेवन करने से चेहरे पर कांती आ जाती है।

त्रिफला, शहद और घृतकुमारी तीनो को मिला कर जो रसायन बनता है वह सप्त धातु पोषक होता है। त्रिफला रसायन कल्प त्रिदोषनाशक, इंद्रिय बलवर्धक विशेषकर नेत्रों के लिए हितकर, वृद्धावस्था को रोकने वाला व मेधाशक्ति बढ़ाने वाला है। दृष्टि दोष, रतौंधी (रात को दिखाई न देना), मोतियाबिंद, काँचबिंदु आदि नेत्ररोगों से रक्षा होती है और बाल काले, घने व मजबूत हो जाते हैं।

डेढ़ माह तक इस रसायन का सेवन करने से स्मृति, बुद्धि, बल व वीर्य में वृद्धि होती है।

दो माह तक सेवन करने से चश्मा भी उतर जाता है।

विधिः ५०० ग्राम त्रिफला चूर्ण, ५०० ग्राम देसी गाय का घी व २५० ग्राम शुद्ध शहद मिलाकर शरदपूर्णिमा की रात को चाँदी के पात्र में पतले सफेद वस्त्र से ढँक कर रात भर चाँदनी में रखें। दूसरे दिन सुबह इस मिश्रण को काँच अथवा चीनी के पात्र में भर लें।

सेवन-विधिः बड़े व्यक्ति १० ग्राम छोटे बच्चे ५ ग्राम मिश्रण सुबह-शाम गुनगुने पानी के साथ लें दिन में केवल एक बार सात्त्विक, सुपाच्य भोजन करें। इन दिनों में भोजन में सेंधा नमक का ही उपयोग करें। सुबह शाम गाय का दूध ले सकते हैं। सुपाच्य भोजन दूध दलिया लेना उत्तम है कल्प के दिनों में खट्टे, तले हुए, मिर्च-मसालेयुक्त व पचने में भारी पदार्थों का सेवन निषिद्ध है। ४० दिन तक मामरा बादाम का उपयोग विशेष लाभदायी होगा। कल्प के दिनों में नेत्रबिन्दु का प्रयोग अवश्य करें।

मात्रः ४ से ५ ग्राम तक त्रिफला चूर्ण सुबह के वक्त लेना पोषक होता है जबकि शाम

को यह रेचक (पेट साफ़ करने वाला) होता है। सुबह खाली पेट गुनगुने पानी के साथ इसका सेवन करें तथा एक घंटे बाद तक पानी के अलावा कुछ ना खाएं और इस नियम का पालन कठोरता से करें ।

सावधानीः दूध व त्रिफला के सेवन के बीच में दो ढाई घंटे का अंतर हो और कमजोर व्यक्ति तथा गर्भवती स्त्री को बुखार में त्रिफला नहीं खाना चाहिए।

घी और शहद कभी भी सामान मात्रा में नहीं लेना चाहिए यह खतरनाक जहर होता है ।

त्रिफला चूर्ण के सेवन के एक घंटे बाद तक चाय–दूध कॉफ़ी आदि कुछ भी नहीं लेना चाहिये।

त्रिफला चूर्ण हमेशा ताजा खरीद कर घर पर ही सीमित मात्रा में (जो लगभग तीन चार माह में समाप्त हो जाये) पीसकर तैयार करें व सीलन से बचा कर रखे और इसका सेवन कर पुनः नया चूर्ण बना लें।

त्रिफला–से–कायाकल्प

कायाकल्प हेतु निम्बू लहसुन, भिलावा, अदरक आदि भी है। लेकिन त्रिफला चूर्ण जितना निरापद और बढ़िया दूसरा कुछ नहीं है।

आयुर्वेद के अनुसार त्रिफला के नियमित सेवन करने से कायाकल्प हो जाता है। मनुष्य अपने शरीर का कायाकल्प कर सालों साल तक निरोग रह सकता है, देखे कैसे ?

एक वर्ष तक नियमित सेवन करने से शरीर चुस्त होता है।

दो वर्ष तक नियमित सेवन करने से शरीर निरोगी हो जाता हैं।

तीन वर्ष तक नियमित सेवन करने से नेत्र–ज्योति बढ जाती है।

चार वर्ष तक नियमित सेवन करने से त्वचा कोमल व सुंदर हो जाती है।

पांच वर्ष तक नियमित सेवन करने से बुद्धि का विकास होकर कुशाग्र हो जाती है।

छः वर्ष तक नियमित सेवन करने से शरीर शक्ति में पर्याप्त वृद्धि होती है।

सात वर्ष तक नियमित सेवन करने से बाल फिर से सफ़ेद से काले हो जाते हैं।

आठ वर्ष तक नियमित सेवन करने से वृद्धावस्था से पुनः यौवन लौट आता है।

नौ वर्ष तक नियमित सेवन करने से नेत्र–ज्योति कुशाग्र हो जाती है और सूक्ष्म से सूक्ष्म वस्तु भी आसानी से दिखाई देने लगती हैं।

दस वर्ष तक नियमित सेवन करने से वाणी मधुर हो जाती है यानी गले में सरस्वती का वास हो जाता है।

ग्यारह वर्ष तक नियमित सेवन करने से वचन सिद्धि प्राप्त हो जाती है अर्थात् व्यक्ति जो भी बोले सत्य हो जाता है।

राष्ट्रसन्त ब्रह्मलीन महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज

गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त योगी आदित्यनाथ जी महाराज

अक्षय तृतीया सामाजिक, सांस्कृतिक एवं अध्यात्मिक शिक्षा का अनूठा पर्व है

***डॉ. अभिषेक कुमार उपाध्याय**

भारतीय पञ्चांग एवं सनातन परम्परा के अनुसार वैशाख शुक्ल पक्ष की तृतीया तिथि को अक्षय तृतीया कहा जाता है। अक्षय तृतीया तिथि सामाजिक, सांस्कृतिक एवं अध्यात्मिक शिक्षा का अनूठा पर्व है। अक्षय तृतीया का भारतीय जनमानस में बड़ा महत्व है। इस दिन स्नान, होम, जप, दान आदि का अनंत फल मिलता है, ऐसा शास्त्रों का मत है। वर्ष में साढ़े तीन अक्षय मुहूर्त है, उसमें प्रमुख स्थान अक्षय तृतीया का है। यह बहुत ही उत्तम स्थिति का संयोग होता है। इसके विषय में विस्तार से बात करे तो यह चैत्र शुक्ल गुड़ी पड़वा, वैशाख शुक्ल अक्षय तृतीया, आश्विन शुक्ल विजयादशमी तथा दीपावली की पड़वा का आधा दिन। इसीलिए इन्हें वर्ष भर के साढ़े तीन मुहूर्त का पर्व भी कहा जाता है। इस तिथि को अनेक व्रत, त्योहार, पर्व मनाए जाते हैं। इसलिए इस तिथि का विशेष ऐतिहासिक महत्व है। आइए इसके कुछ महत्वपूर्ण पर्वो एवं तथ्यों के विषय में संक्षेप में जानते हैं। यह ब्रह्माजी के पुत्र अक्षय कुमार का अवतरण तिथि है। इसे माँ अन्नपूर्णा का उद्‌भव दिवस के रूप में माना जाता है। इसी दिन चिरंजीवी महर्षि परशुराम जी का आविर्भाव हुआ था इसलिए इस तिथि विशेष को परशुराम जी का जन्मोत्सव भी विश्वभर में मनाया जाता है। इसी विशेष मुहूर्त में बटुकों का उपनयन या यज्ञोपवीत भी करवाया जाता है। इसी विशेष मुहूर्त में धन के देवता कुबेर को खजाना मिला था। शास्त्र के अनुसार माँ गंगा का धरती पर अवतरण भी इसी तिथि को हुआ था। इसी विशेष तिथि को भगवान् सूर्य ने पांडवों को अक्षय पात्र दिया। महाभारत युद्ध का समापन तिथि है अक्षय तृतीया। अक्षय तृतीया को ही महर्षि वेदव्यास जी ने महाभारत नामक महाकाव्य की रचना गणेश जी के साथ शुरू किया था। भविष्य पुराण के अनुसार अक्षय तृतीया तिथि को ही सतयुग एवं त्रेतायुग का आरम्भ हुआ ऐसा वर्णन मिलता है। भगवान के २४ अवतारों में भगवान् परशुराम जी, नर नारायण एवं हयग्रीव आदि तीन अवतार का शुभ तिथि वैशाख शुक्ल पक्ष की तृतीया है अर्थात् अक्षय तृतीया ही है। ऐसे तो सभी बारह महीने की शुक्ल पक्ष की तृतीया को शुभ माना जाता है उसमें वैशाख शुक्ल पक्ष की तृतीया तिथि स्वयं सिद्ध मुहूर्तों में मानी जाती है।

यह तिथि वसन्त के अन्त एवं ग्रीष्म के आरम्भ का द्योतक है। जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ ऋषभदेव भगवान् ने अपने १३ महीने का कठिन उपवास का पारणा इक्षु (गन्ने) के रस से किया था।

भारत के चार धामों में प्रसिद्ध तीर्थ स्थल श्रीबद्री नारायण धाम जी का कपाट भी इसी

---

*मुख्यन्यासी- श्री श्री १००८ श्री मौनी बाबा ट्रस्ट (न्यास) एवं
गुरुकुल एवं मन्दिर सेवा योजना प्रमुख जम्मू कश्मीर प्रान्त

तिथि विशेष पर खोले जाते है। इसी अवसर पर बृंदावन के श्रीबाँके बिहारी मंदिर में केवल इसी तिथि पर भगवान् श्रीकृष्ण जी के चरण विग्रह के दर्शन होते हैं। इसी तिथि पर भगवान् जगन्नाथ के रथ यात्रा में निकलने वाले रथ को बनाने का कार्य प्रारम्भ किया जाता है। जगत् गुरु शंकराचार्य जी ने कनकधारा स्तोत्र की रचना इसी तिथि विशेष पर की थी। शास्त्रों के अनुसार इन्हें भगवान् विष्णु का छठा अवतार माना जाता है। ऐसे तो भगवान परशुराम जी को चिरंजीवी माना गया हैं - अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनुमांश्च विभिषणः। कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः। अर्थात अश्वत्थामा, राजा बलि, व्यास, हनुमान, विभीषण, कृपाचार्य और भगवान् परशुराम ये सातों विभूतियाँ अमर हैं। अब प्रश्न उठता है कि कौन थे भगवान् परशुराम ? यह एक मिथकीय चरित्र है या कुछ ऐतिहासिकता भी है इनके व्यक्तित्व और कृतित्व के निरूपण में ? यह एक मुश्किल प्रश्न हो सकता है। हम भारत के अतीत के एक बड़े हिस्से को अभी भी ऐतिहासिकता के दायरे में नहीं ला पाए हैं परन्तु यह विशेष अवतार का चमत्कार ही कहा जा सकता है। जो इतिहास वेत्ताओं की सीमाओं का ही भान कराता है, सत्य का नहीं! यदि हम प्रमाण नहीं इकट्ठा कर पा रहे हैं तो यह कैसे कहा जा सकता है कि लोक मानस में हजारों सालों से जीवंत अनेक वृत्तांत सब झूंठे हैं। हाँ बहुत सी बातों में छुपी अतिरन्जनाओं, समय के साथ की विकृतियों में भी हमें कुछ काम की बातें मिल सकती हैं लेकिन हम पूर्वाग्रहों से मुक्त आँख, कान खोल अपने अतीत का अवगाहन करें।

मुझे लगता है भगवान् परशुराम वैष्णव संस्कृति के एक यशस्वी ध्वजावाहक थे। भगवान् परशुराम एक उद्भट विद्वान् और पराक्रमी इन दोनों विपरीत से लगने वाली विशिष्टियों के धनी थे और वे निरंतर अपने राज्य के विस्तार में लगे थे। उन्होंने दक्षिण में अपने तत्कालीन वैष्णवी संस्कृति के विरोधियों से जमकर लोहा लिया। बस केवल इक्ष्वाकुवंश जिसके कालांतर में यशस्वी वंशधर राजा राम हुए को छोड़ते हुए उन्होंने तत्कालीन दुष्ट, आक्रामक क्षत्रियों का एक बार नहीं अनेक बार नाश किया। उनके धरती पर बढ़ते प्रभुत्व पर विराम लगा दिया। वह बड़े बड़े आंतरिक युद्धों का समय था। शायद उत्तर की ओर से धमक रही आक्रान्ताओं की भीड़ से संघर्ष की शुरुआत थी और यह जाकर स्वयं वैष्णवीं राम के बढ़ते अधिपत्य के साथ समाप्त हुयी। कथायें बताती हैं कि किस तरह परशुराम राम का सम्मिलन हुआ और तब जाकर परशुराम का अभियान का रथ रुका। वे पुनः आंध्र स्थित महेंद्र पर्वत पर जाकर ध्यानमग्न हो गए। वाल्मिकी रामायण और रामचरितमानस में यह प्रसंग बड़े ही रोचक तरीके से प्रस्तुत हुआ है। परशुराम का राम से समन्वय वैष्णवों के उत्कर्ष और शैवों के किंचित पराभव का भी द्योतक हो सकता है। यद्यपि राम में शैवों और वैष्णवों दोनों के आमेलन का प्रभाव कालांतर के तुलसीदास जैसे चिन्तक और

कथाकार दर्शाते हैं। यदि भगवान परशुराम जी के व्यक्तित्व को इन अलग अलग काल के मनीषियों की दृष्टि से विचार करें तो–

पुरतः चतुरो वेदाः, पृष्ठतः सशरं धनुः, इदं ब्राह्मं इदं क्षात्रं शापादपि शरादपि।

जिसका मुख चारों वेदों से सुशोभित ,पीठ पर शरों सहित धनुष, एक ओर तो ब्राह्मण – तेज रूपी शास्त्र और दूसरी ओर क्षत्रियोचित शस्त्र यह श्लोक आज के ब्राह्मणों को भी प्रेरित करता है! अब देखिये तुलसी परशुराम को किस रूप में देखते हैं – वृषभ कंध अरु बाहु विशाला, चारु जनेऊ माल मृगछाला। कटि मुनि बसन तून दुई बांधे, धनु सर कर कुठारु कल काँधे।। यहाँ तुलसी फरसे को भी समाहित कर लाये। अब राष्ट्र कवि दिनकर जी भी भगवान् परशुराम जी के व्यक्तित्व पर लिखते है। मुख में वेद पीठ पर तरकस, कर में कठिन कुठार विमल, शाप और शर दोनों ही थे जिस महानऋषि के संबल। अर्थात वे ज्ञानार्जित वचन और पराक्रम दोनों से अपने विरोधी को श्रीहीन करने में पूर्णतया समर्थ थे। अतीत में एक लम्बे समय तक चलने वाले देश के आंतरिक युद्ध के महानायक थे भगवान परशुराम। दीर्घकालिक युद्ध के महानायक भगवान परशुराम जी का प्रभाव इसलिए भी कई युगों तक बना रहा जिसमें कभी क्षत्रिय विश्वामित्र और महामुनि वशिष्ठ भी भिड़े थे और विश्वामित्र अकस्मात् बोल पड़े थे – धिक् बलम् क्षत्रिय बलम् ब्रह्म तेजो बलम् बलम् एकेन ब्रह्मदण्डेन सर्वस्त्राणि हतानि मे। इसका विशिष्ट वर्णन वाल्मीकि रामायण में मिलता है। अक्षय तृतीया अपने आप में स्वयं एक सिद्ध मुहूर्त है इस अवसर पर कोई भी शुभ कार्य का आरम्भ कर सकते है। उपरोक्त सभी बिंदुओं पर दृष्टि केन्द्रित करे तो यह अक्षय तृतीया तिथि सामाजिक, ऐतिहासिक, वैज्ञानिक, सांस्कृतिक एवं अध्यात्मिक संस्कृति व ज्ञान परम्परा का भी अनूठा पर्व है।

अक्षय तृतीया का भारतीय जनमानस में बहुत बड़ा महत्व है। इस दिन स्नान, होम, जप, दान आदि का अनंत फल मिलता है। इसीलिए इस तिथि को सर्वसिद्ध (अबूझ) तिथि के रूप में मान्यता मिली हुई है।

अक्षय तृतीया पर्व विशेष स्मरणीय एवं चिंतनीय पर्व है। यह दस महाविद्याओं में भगवती पीतांबरा के अनन्य साधक परशुराम जी ने अपनी शक्ति का प्रयोग सदैव कुशासन के विरुद्ध किया। निर्बल और असहाय समाज की रक्षा के लिए उनका कुठार अत्याचारी कुशासकों के लिए काल बन चुका था।

अधर्मी कार्तवीर्य (सहस्रबाहु) जिसने परशुरामजी के पिता महर्षि जमदग्नि को मारा था, उसका वध कर उसकी राजसत्ता को परशुरामजी ने छिन्न–भिन्न कर दिया। आज लोग किसी भी जीत को प्रकट करने के लिए जिन दो उंगलियों को उठाकर विजय

मुद्रा का प्रदर्शन करते हैं वह परशुरामजी की विजय मुद्रा की नकल मात्र है। ग्रंथों में भगवान् परशुराम जी की इस विजय मुद्रा के कई भाव मिलते हैं। इसका एक भाव यह है जो शासक जीव और परमात्मा में अंतर समझते हैं उनका मैंने मर्दन किया है और दूसरा यह कि मन सुख और धर्म विमुख राजाओं को यह समझ लेना चाहिए कि या तो जनक की तरह निर्गुण निराकार ब्रह्म को जानने वाले तत्वज्ञानी राजा बनो या महाराजा दशरथ आदि की तरह सगुण साकार ब्रह्म को स्वीकार करो। अवैदिक अमर्यादित राजा मेरे कुठार से बच नहीं सकते इसीलिए उन्होंने तर्जनी और मध्यमा दो उंगलियों को प्रदर्शित कर तात्विक विजय मुद्रा का प्रदर्शन किया। इसीलिए पुराणों में कहीं भी कौशल नरेश महाराजा दशरथ और मिथिला नरेश महाराज जनक के साथ परशुरामजी के मनमुटाव के उदाहरण नहीं दिखते।

एक सुंदर प्रसंग के माध्यम से इसे समझाने का प्रयास किया गया है जब श्रीराम द्वारा धनुष तोड़ने के बाद समस्त राजाओं की दुरभिसंधि हुई कि श्रीराम ने धनुष तो तोड़ लिया है लेकिन इन्हें सीता स्वयंवर से रोकना होगा। अतः अपनी-अपनी सेनाओं की टुकड़ियों के साथ धनुष यज्ञ में आए समस्त राजा एकजुट होकर श्रीराम से युद्ध के लिए कमर कसकर तैयार हो गए। धनुष यज्ञ गृहयुद्ध में बदलने वाला था, ऐसी विकट स्थिति में वहां अपना फरसा लहराते हुए परशुरामजी प्रकट हो जाते हैं। वे राजा जनक से पूछते हैं कि तुरंत बताओ कि यह शिव धनुष किसने तोड़ा है अन्यथा जितने भी राजा यहां बैठे हैं मैं क्रमशः उन्हें अपने परशु की भेंट चढ़ाता हूं। तब श्रीराम विनम्र भाव से कहते हैं- हे नाथ, शंकर के धनुष को तोड़ने वाला कोई आपका ही दास होगा। परशुराम-राम संवाद के बीच में ही लक्ष्मण उत्तेजित हो उठे। विकट लीला प्रारंभ हो गई। संवाद चलते रहे। लीला आगे बढ़ती रही। परशुरामजी ने श्रीराम से कहा- अच्छा, मेरे विष्णु धनुष में तीर चढ़ाओ। तीर चढ़ गया, परशुरामजी ने प्रणाम किया और कहा- मेरा कार्य अब पूरा हुआ, आगे का कार्य करने के लिए श्रीराम आप आ गए हैं। गृहयुद्ध टल गया। सारे राजाओं ने श्रीराम को अपना सम्राट मान लिया, भेंट पूजा की एवं अपनी-अपनी राजधानी लौट गए। श्रीराम के केंद्रीय शासन नियमों से धर्मयुक्त राज्य करने लगे। देश में सर्वत्र शांति होने लगी। अब श्रीराम निश्चिंत थे, क्योंकि उन्हें तो देश की सीमाओं के पार संचालित आतंक के खिलाफ लड़ना था इसीलिए अयोध्या आते ही वन को चले गए। पंचवटी में लीला रची गई, लंका कूच हुआ। रावण का कुशासन समाप्त हुआ। रामराज्य की स्थापना हुई। अतः रामराज्य की भूमिका तैयार करने वाले भगवान् परशुराम ही थे। भगवान् श्री परशुराम जी के विषय में जितना भी बताया जाए वह कम होगा लेकिन आज युवा पीढ़ी को हमारे आदर्श चरित्र के विषय में विशिष्ट जानकारी हो सके इसी चिन्तन से इन विचारणीय बिंदुओं को प्रकाश में लाने का प्रयास हुआ है। ■

श्री गोरखनाथ मन्दिर के प्रकाशन

1.	गोरखदर्शन	आचार्य अक्षय कुमार बनर्जी	150.00
2.	महन्त दिग्विजयनाथ स्मृति ग्रन्थ	डॉ. भगवती प्रसाद सिंह	80.00
3.	नाथ योग	आचार्य अक्षय कुमार बनर्जी	10.00
4.	आदर्श योगी	रघुनाथ शुक्ल	40.00
5.	महायोगी गुरु गोरखनाथ एवं उनकी तपस्थली	रामलाल श्रीवास्तव	15.00
6.	गोरखबानी	रामलाल श्रीवास्तव	110.00
7.	गोरक्षसिद्धान्त संग्रह	रामलाल श्रीवास्तव	30.00
8.	श्री गोरक्ष वैदिक पूजा पद्धति	वेदाचार्य रामानुज त्रिपाठी	8.00
9.	अमनस्क योग	रामलाल श्रीवास्तव	15.00
10.	गोरक्ष पद्धति	रामलाल श्रीवास्तव	60.00
11.	विवेक मार्तण्ड		7.00
12.	महार्थ मंजरी		6.00
13.	गोरखचरित्र	रामलाल श्रीवास्तव	30.00
14.	हठयोग प्रदीपिका	रामलाल श्रीवास्तव	30.00
15.	सिद्धसिद्धान्तपद्धति	रामलाल श्रीवास्तव	25.00
16.	योग रहस्य	आचार्य अक्षय कुमार बनर्जी	25.00
17.	योग बीज	रामलाल श्रीवास्तव	6.00
18.	शाबर चिंतामणि	नित्यनाथ सिद्ध मत्स्येन्द्रनाथ	7.00
19.	योगी सम्प्रदाय (नित्कर्म संचय)		90.00
20.	गोरख चालीसा		2.00
21.	नाथसिद्ध चरितामृत	रामलाल श्रीवास्तव	70.00
22.	नाथ पंथ गढ़वाल के परिप्रेक्ष्य में	विष्णुदत्त कुकरेती	30.00
23.	अमरकाया महायोगी गोरखनाथ	श्रीमती माया देवी	10.00
24.	युगपुरुष महन्त दिग्विजयनाथ ने कहा था	महन्त योगी आदित्यनाथ	12.00
25.	गोरखनाथ और नाथसिद्ध	डॉ. अनुज प्रताप सिंह	130.00
26.	गोरक्षदर्शन	विजय पाल सिंह	40.00
27.	तन प्रकाश	श्री श्री 108 बाबा चुन्नीनाथ जी	20.00
28.	हठयोग स्वरूप एवं साधना	महन्त योगी आदित्यनाथ	100.00
29.	यौगिक षट्कर्म	महन्त योगी आदित्यनाथ	21.00
30.	नाथ सिद्धों का तात्त्विक विवेचन	अनुज प्रताप सिंह	70.00
31.	गोरखमहिमा	महेन्द्र नाथ गोस्वामी	30.00
32.	सुभाषित त्रिशती	रामलाल श्रीवास्तव	60.00
33.	राष्ट्रीयता के अनन्य साधक महन्त अवेद्यनाथ (3 खण्ड)	प्रो. सदानन्दप्रसाद गुप्त	1100.00
34.	राजयोग स्वरूप एवं साधना	महन्त योगी आदित्यनाथ	100.00
35.	Philosophy of Gorakhnath	A.K. Banerjee	175.00
36.	The Nath-Yogi Sampradaya and The Gorakhnath Temple		3.50
37.	An Introduction to Nath-Yoga	A.K. Banerjee	15.00
38	महन्त अवेद्यनाथ स्मृति ग्रन्थ	प्रो. सदानन्दप्रसाद गुप्त	600.00
39	योगिराज बाबा गम्भीरनाथ	महन्त योगी आदित्यनाथ	500.00
40	योग एवं महायोगी गोरखनाथ	महन्त योगी आदित्यनाथ	175.00
41	महायोगी गुरु श्रीगोरखनाथ		40.00
42	श्रीगोरखनाथ मन्दिर एवं गोरखपुर का इतिहास		40.00
43	योगिराज बाबा गम्भीरनाथ		40.00
44	युगद्रष्टा महन्त दिग्विजयनाथ		50.00
45	राष्ट्रसन्त महन्त अवेद्यनाथ		50.00

ए.पी./जी.आर-125/14 ए.पी./29075/76

पुनर्नवा

पुनर्नवा, साटी या विषखपरा के नाम से विख्यात यह वनस्पति वर्षा ऋतु में बहुतायत से पायी जाती है। शरीरकी आन्तरिक एवं बाह्य सूजन को दूर करने के लिये यह अत्यन्त उपयोगी है।

यह तीन प्रकार की होती है- सफेद, लाल एवं काली। काली पुनर्नवा प्राय: देखने में नहीं आती। पुनर्नवाकी सब्जी शोथ (सूजन)-नाशक, मूत्रल तथा स्वास्थ्यवर्द्धक है।

पुनर्नवा कड़वी, उष्ण, तीखी, कसैली, रुच्य, अग्निदीपक, रूक्ष, मधुर, खारी, सारक, मूत्रल एवं हृदय के लिये लाभदायक है। यह पाण्डुरोग, विषदोष एवं शूल का भी नाश करती है।

पुनर्नवा - औषधीय प्रयोग

(१) नेत्रो ंकी फूली - पुनर्नवा की जड़को घी में घिसकर नेत्र में लगाने से लाभ होता है।

(२) नेत्रों की खुजली (अक्षिकण्डू) - पुनर्नवा की जड़ को शहद अथवा दूध में घिसकर आँजने से लाभ होता है।

(३) नेत्रों से पानी गिरना (अक्षिस्त्राव)- पुनर्नवा की जड़ को शहद में घिसकर आँखों में लगाना लाभदायक है।

(४) रतौंधी - पुनर्नवा की जड़ को कांजी में घिसकर आँखों में आँजना लाभकारी है।

(५) खूनी बवासीर - पुनर्नवा की जड़ को हल्दी के काढ़े में देने से लाभ होता है।

(६) पीलिया (Jaundice) - पुनर्नवा के पञ्चाङ्ग को शहद एवं मिस्त्री के साथ ले अथवा उसका रस या काढ़ा पिये।

(७) मस्तक-रोग एवं ज्वर-रोग - पुनर्नवा के पञ्चाङ्गका २ ग्राम चूर्ण, १० ग्राम घी एवं २० ग्राम शहद में प्रात:-सायं खाने से लाभ होता है।

(८) जलोदर - पुनर्नवा की जड़के चूर्ण को शहद के साथ खाने से लाभ होता है।

(९) सूजन-पुनर्नवा की जड़ का काढ़ा पीने एवं सूजन पर लेप करने से लाभ होता है।

(१०) पथरी- पुनर्नवा को दूध में उबालकर सुबह- शाम पीना चाहिये।

प्रकाशक :
गोरखनाथ मन्दिर, गोरखपुर-२७३०१५
web: www.gorakhnathmandir.in | E-mail: gorakhnathmandir@yahoo.com
दूरभाष: (०५५१) २२५५४५३, २२५५४५४, फैक्स: ०५५१-२२५५४५५